विश्वविद्यालय-रजतजयन्ती-ग्रन्थमाला

[२८]

जपुजी साहिब

(ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ)

कुलपति डॉ. मण्डन मिश्र की प्रस्तावना से अलङ्कृत

व्याख्याकार एवं सम्पादक

डॉ. रामरङ्ग शर्मा



सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी

UNIVERSITY-SILVERJUBILEE-GRANTHAMĀLĀ
[Vol. 28]

JAPUJĪ SĀHIBA

FOREWORD BY

DR. MANDAN MISHRA

VICE-CHANCELLOR

EDITED BY

DR. RĀMARAṄGA ŚARMĀ

Director

Sadguru Ram Singh Peetha, Bhaini Sahib

Sampurnanand Sanskrit University

Varanasi



. VARANASI
1998

Research Publication Supervisor—
Director, Research Institute,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi.



Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Publication Officer,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



First Edition, 500 Copies

Price : Rs. 150.00



Printed at—
Shreejee Computer Printers
J-12/5, Nati Imali
Varanasi-221 002

विश्वविद्यालय-रजतजयन्ती-ग्रन्थमाला

[२८]

जपुजी साहिब
(ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ)

कुलपति डॉ. मण्डन मिश्र की प्रस्तावना से अलङ्कृत

व्याख्याकार एवं सम्पादक

डॉ. रामरङ्ग शर्मा

निदेशक

सद्‌गुरु रामसिंह पीठ, भैणी साहिब

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी



वाराणसी

५५ वैक्रमाब्द　　१९१६ शकाब्द　　१९९८ खैस्ताब्द

अनुसन्धान-प्रकाशन-पर्यवेक्षक—
निदेशक, अनुसन्धान-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी।

❐

प्रकाशक—
डॉ. हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी
प्रकाशनाधिकारी,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१ ००२

❐

प्राप्ति-स्थान—
विक्रय-विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१ ००२

❐

प्रथम संस्करण – ५०० प्रतियाँ

मूल्य – १५०.०० रूपये

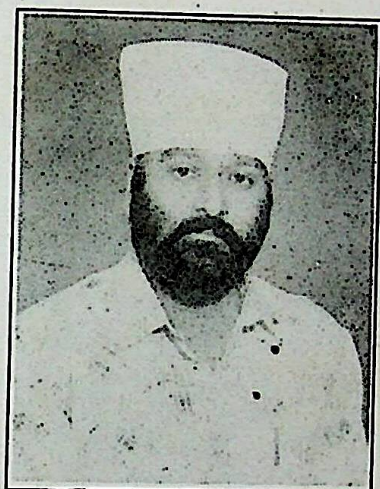
❐

मुद्रक—
श्रीजी कम्प्यूटर प्रिण्टर्स
जे. १२/५, नाटी इमली
वाराणसी-२२१ ००२

सम्पर्णम्



भारतीय संगीत, संस्कृत, संस्कृति, संस्कारों के संरक्षक
श्री सद्गुरु जगजीत सिंह जी महाराज को
सादर अर्पित



. श्री मनजीत सिंह

साधुवाद एवं धन्यवाद

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में 'श्रीसद्गुरु रामसिंह पीठ' की स्थापना में श्रीसद्गुरु जगजीत सिंह महाराज के कृपापात्र, विश्वासपात्र, काशी के समाजसेवी, सहृदय श्री मनजीत सिंह नामधारी जी का बड़ा ही योगदान रहा है। आपकी कर्मठता, कर्मण्यता को देखकर ही श्रीसद्गुरु जी ने इस पीठ की देखभाल का कार्य आपको सौंपा है। आपके हृदय में भारतीय संस्कृति की मूल स्रोत संस्कृत-भाषा तथा 'गुरुमुखी' को गरिमापूर्ण स्थान दिलाने की प्रबलतम इच्छा है।

'जपुजी साहिब' के पावन प्रकाशन पर हम श्रीसद्गुरु रामसिंह पीठ एवं नामधारी दरबार की ओर से श्री मनजीत सिंह (सचिव पीठ) को हार्दिक साधुवाद और धन्यवाद देते हैं कि वे इसी तरह गुरु घर की सेवा में सदा तत्पर रहें। यह सत्य है कि इनकी प्रेरणा से शीघ्र ही 'स्वतन्त्रता-आन्दोलन में नामधारी दरबार का योगदान और सुधार' पुस्तक का प्रकाशन भी होने जा रहा है।

वशिष्ठ त्रिपाठी
दर्शन-संकायाध्यक्ष
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी

रामरङ्ग शर्मा
निदेशक, श्रीसद्गुरु रामसिंह पीठ
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी



प्रस्तावना

विश्व की सभी भाषाएँ 'भाषा' के नाम से जानी जाती हैं, किन्तु देवभाषा को **'संस्कृत'** एवं सिंख सम्प्रदाय के गुरुओं की वाणी को **'गुरुमुखी'** के नाम से अभिहित किया जाता है। इन दो भाषाओं की अपनी विशेषताएँ हैं—ये जैसे बोली जाती हैं, वैसे ही लिखी भी जाती हैं। अंग्रेजी भाषा की तरह इसके उच्चारण और लेखन में अन्तर कहीं नहीं होता। कारण स्पष्ट है कि वैदिक ऋचाओं तथा गुरुमुखी की साखा पउडियों का साक्षात्कार, ऋषियों और गुरुओं ने पंजाब की पावन धरती सारस्वत प्रदेश में किया था, जिसका स्मरण करते हुए आज भी सनातन धर्मावलम्बी वैदिक विद्वान्, देवार्चना के समय पञ्चामृत से अपने आराध्य को स्नान कराते समय वेदी में सस्वर कहते हैं—

ओऽम् पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशोऽभवत्सरित्।।

(यजुर्वेद–३४।११)

भारतीय वाङ्मय की शुद्धता और अखण्डता को बनाये रखने हेतु ही महाकवि दण्डी ने अपने 'काव्यादर्श' में **'वाचामेव प्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते'** की घोषणा के साथ भाषा को लोक-व्यवहार के लिये अनिवार्य माना है। शब्दार्थ-बोध और वाणी की शुद्धता को लक्ष्य करके ही महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि ने **'अपदं न प्रयुञ्जीत'** कहकर वक्ता और लेखक जगत् को सचेत कर दिया है। वाणी की पावनता, शुद्धता पर आह्लादित होकर भगवान् श्रीराम ने हनुमान् के सम्बन्ध में कहा था—

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपभाषितम्।।

(वाल्मीकि-रा., किष्किन्धा. ३।३।२९)

'जपुजी साहिब' परम श्रद्धेय, मध्यकालीन समाज सुधारक सन्त-परम्परा के सुमेरु श्री गुरु नानकदेव की अमर रचना है, जिसमें आत्मा की इच्छा, ज्ञान, क्रिया तीनों शक्तियों का समन्वय रूप दृष्टिगोचर होता है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन को पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति में यहाँ सहायक माना गया है। साधक के लिए धर्मखण्ड, ज्ञानखण्ड, श्रमखण्ड, कर्मखण्ड के प्रतिपालन के बाद सच्चखण्ड (गुरुधाम) पाने का बड़ा मनोहारी चित्रण किया गया है। अड़तिस (३८) पउड़ियों वाले इस ग्रन्थरत्न

में सर्वप्रथम मूल मन्त्र के रूप में श्री गुरु नानकदेव ने मंगलाचरण करते हुए अपने सिद्धान्त अद्वैतवाद, एकेश्वरवाद का प्रतिपादन इस प्रकार किया है—

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु ।
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रंसादि ।।

प्रस्तुत रचना में गुरुमुखी लिपि के साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी में भी गुरुवाणी को प्रस्तुत किया गया है, जिससे अन्य लोगों को भी गुरुमुखी लिपि का ज्ञान सुलभ हो सके। पुस्तक के आरम्भ में एक विस्तृत भूमिका है, जिसमें गुरुओं के जीवनवृत्त की झलक के साथ सिखी-सिद्धान्तों, उद्देश्यों का भी दिग्दर्शन कराया गया है। अन्त में परिशिष्ट के रूप में एक लघु-निबन्ध दिया गया है, जिसका शीर्षक है—"देग से तेग तक संक्षिप्त सिखी सफर" तथा कतिपय गुरुवाणी में प्रयुक्त शब्दों को 'अभिधान-कोश' के रूप में दिखाया गया है।

श्री सद्‌गुरु रामसिंह शोधपीठ, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के निदेशक **डॉ. रामरङ्ग शर्मा** मेरे शाश्वत सुहृद् हैं। इस विश्वविद्यालय की सभा एवं कार्यपरिषद् के निर्वाचित सदस्य के रूप में डॉ. शर्मा ने इस संस्था के हितों एवं गौरव की रक्षा में जो महत्त्वपूर्ण योगदान किया है, वह सदा स्मरणीय रहेगा। शारदा प्रदेश (पंजाब) में जन्मे श्री शर्मा जी द्वारा शारदातनय के **'भावप्रकाशनम्'** पर लिखित शोध-ग्रन्थ का प्रकाशन भी सन् १९८४ में इस विश्वविद्यालय द्वारा 'विश्वविद्यालय-रजत-जयन्ती-ग्रन्थमाला' के प्रथम-पुष्प के रूप में किया गया है। प्रस्तुत रचना **'जपुजी साहिब'** को यहाँ कविशिरोमणि श्रीहर्ष द्वारा 'नैषधचरितम्' में दिखाये गये शिक्षा के अधीतिः, बोधः, आचरणम्, प्रचारणम् के अनुसार चार भागों में विभाजित किया गया है।

मैं **डॉ. रामरङ्ग शर्मा** को मंगल-कामनाएँ देता हूँ कि वे निरन्तर माँ शारदा की सेवा में लगे रहें। नामधारी दरबार, भैणी साहिब, जनपद-लुधियाना (पंजाब) के श्री सद्‌गुरु **श्री जगजीत सिंह महाराज** का हार्दिक वन्दन करता हूँ, जिन्होंने हमारे विश्वविद्यालय में अपने आदिपुरुष **श्री गुरु रामसिंह महाराज** के नाम से पीठ खोलकर हमें अनुगृहीत किया है। इस रचना के सर्वप्रथम गुरुमुखी लिपि के साथ उत्कृष्ट प्रकाशन हेतु विश्वविद्यालय के प्रकाशनाधिकारी **डॉ. हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी** तथा उनके सहयोगियों एवं श्रीजी-मुद्रणालय के संचालक **श्री अनूप कुमार नागर** को सहर्ष धन्यवाद देते हुए इस रचना को मैं पाठकों की सेवा में अर्पित करता हूँ।

वाराणसी
गुरुपूर्णिमा,
वि.सं. २०५५

मण्डन मिश्र
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ-संख्या
दो शब्द	१-६
आमुख	७-२४
सच्चा सौदा	७-८
गुरु का जहाज	८-९
सिद्ध – गोष्ठी (सिद्ध और गुरु नानकदेव)	९-१०
ग्रन्थ का अनुबन्ध-चतुष्टय	१०
जपुजी का महत्त्व	१०-१३
श्री गुरु नानकदेव की रचनाएँ	१३
श्रीं गुरु नानकदेव द्वारा प्रतिपादित तत्त्व	१३
श्री गुरु नानकदेव के सुधार	१३-१४
सिखधर्म के कतिपय सर्वमान्य ग्रन्थ	१४
कतिपय नित्यनेम ग्रन्थ	१४
प्राचीन प्रामाणिक लेखक	१४
अध्ययन-केन्द्र	१४
मानवता के आलोकपुञ्ज गुरुओं का संक्षिप्त विवरण—	
वेदीवंश	
श्री गुरु नानकदेव जी (आदिगुरु)	१५
श्री गुरु अङ्गददेव जी	१५
श्री गुरु अमरदास जी	१६
सोढ़ीवंश	
श्री गुरु रामदास जी	१६
श्री गुरु अर्जुनदेव जी	१७
श्री गुरु हरिगोविन्द जी	१७

श्री गुरु हरिराम जी — १७-१८
श्री गुरु हरिकृष्ण जी — १८
श्री गुरु तेगबहादुर जी — १८-१९
श्री गुरु गोविन्द सिंह जी — १९

नामधारी-वंश

श्री सद्गुरु बालक जी — १९
श्री सद्गुरु रामसिंह जी — २०
श्री सद्गुरु हरिसिंह जी — २०
श्री सद्गुरु प्रतापसिंह जी — २०-२१
श्री सद्गुरु जगजीत सिंह जी — २१
सिखी के कतिपय मुख्य तीर्थस्थल — २१-२२
श्री जपुजी की प्रश्नावली — २३
धन्यवाद — २४

अधीतिः (अध्ययन) — १-१७

अकाल-पुरुष (ब्रह्म) का स्वरूप — १-३
जप के प्रकार — ३-४
आन्तरिक शान्ति के साधन — ४-६
परब्रह्म के आदेश-पालन से अहङ्कार का नाश — ६-८
परमात्मा की तटस्थता — ८-१०
ईश्वर का नामकरण — ११-१२
ईश्वर की निराकारता — १२-१४
वास्तविक तीर्थ — १४-१५
भगवत्कृपा और स्मरण का महत्त्व — १६-१७

बोधः (ज्ञान) — १८-३९

भगवत्प्राप्ति में श्रवण का माहात्म्य — १८-१९
नाम-श्रवण से जीव की अमरता — १९-२०
नाम-श्रवण से बाह्य एवं आभ्यन्तर साधनों की प्राप्ति — २१-२२
नाम-श्रवण से परमलोक की प्राप्ति — २२-२३
सद्गुरुओं के मन्त्र के मनन से भवसागर से मुक्ति — २४-२५
नाम-स्मरण द्वारा यम-यातनाओं से मुक्ति — २५-२६
नाम-स्मरण से सभी बाधाओं की निवृत्ति — २६-२८
अकाल-पुरुष के नाम के मनन से सहज ही मुक्ति-प्राप्ति — २८-२९

निदिध्यासन द्वारा निराकार की दृग्गोचरता	२९-३३
निदिध्यासन से दैवी सम्पदा की प्राप्ति	३३-३४
निदिध्यासन से तामसी तथा राजसी सृष्टि का बोध	३५-३६
निदिध्यासन से भगवान् की सत्ता का साक्षात्कार	३७-३९
आचरणम् (व्यवहार)	४०-५९
भगवान् की महिमा से बुद्धि की शुद्धता	४०-४१
तीर्थाटन का फल	४२-४४
परमात्मा की सृष्टि का वर्णन	४५-४६
परमात्मा की महिमा	४६-४७
परमात्मा का स्वरूप	४७-५०
परमात्मा द्वारा निःस्वार्थ दान	५०-५२
परमेश्वर का अमूल्य गुणगान	५२-५६
सच्चखण्ड का निरूपण	५६-५९
प्रचारणम् (उपदेश)	६०-७९
सच्चे योग एवं वेश का निरूपण	६०-६१
ज्ञान का निरूपण	६१-६२
माया से सृष्टि की उत्पत्ति	६३-६४
सच्चा आसन और भण्डार	६४-६५
परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग	६६-६७
जीव की अधीनता	६७-६८
धरती का धर्मशाला-स्वरूप	६९-७१
कर्मकाण्ड का धर्मकाण्ड के रूप में वर्णन	७१-७३
श्रवणानन्द तथा दर्शनानन्द की प्राप्ति	७३-७५
कृपाकाण्ड का महत्त्व	७५-७८
'ब्रह्मशब्द' के निर्माण के साधन	७८-७९
फलश्रुतिः	
जीव जगत् के गुरु, पिता आदि का वर्णन	८०-८२
परिशिष्ट—क :	
'देग' से 'तेग' तक का संक्षिप्त सिखी-सफर	८३-८७
पहली शहीदी	८३-८४
श्री गुरुग्रन्थ साहिब	८४
दूसरी शहीदी	८४-८५
शहीदों की फौज	८५

दशम ग्रन्थ ८५-८६

सद्गुरुविलास और नामधारी दरबार ८६-८७

परिशिष्ट-ख : अभिधानकोश ८८-९८

चार युग ८८

नव खण्ड ८८

द्वीप ८९

लोक ८९

शास्त्र ८९-९०

स्मृति ९०

वेद ९०

तीर्थ ९१

चार धाम ९१

द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग ९१

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ९१-९२

पाँच कर्मेन्द्रियाँ ९२

चार पुरुषार्थ ९२

ऋतु ९२

मास ९२

पुराण ९३

तिथि ९३

वार ९४

नदियाँ ९४

समुद्र ९४

जीव ९४-९५

नक्षत्र ९५

योग ९५

करण ९६

राशि ९६-९७

अयन ९७

वेदाङ्ग ९७

दिशाएँ ९७

चार वर्ण ९७-९८

चार आश्रम ९८

दो शब्द (ਦੋ ਸ਼ਬਦ)

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ।।

ਆਦਿ ਗੁਰਏ ਨਮਹ ।।
ਜੁਗਾਦਿ ਗੁਰਏ ਨਮਹ ।।
ਸਤਿਗੁਰਏ ਨਮਹ ।।
ਸ੍ਰੀ ਗੁਰਦੇਵਏ ਨਮਹ ।। (ਸੁਖਮਨੀ ਸਾਹਿਬ)

विश्व संस्कृति, सभ्यता की प्रतीक श्री सद्गुरु की वाणी (वचन) में विश्वास करने वाला गुरुमुख, वचन केवल गुरु को देता है औरों को तो प्रवचन देता है। गुरुमत वालों का दृढ़ विश्वास है कि 'आत्मबोध'रूपी शेरनी का दूध केवल सोने के बर्तन में ही ठहरता है। गीदड़-झाँक करने वाले कभी भी मुक्ति-मंजिल पर पग नहीं धरते। प्रेमी पंछी (परिन्दा) परमात्मा-प्राप्ति हेतु ही पंख मारता है, क्योंकि उसे पता है—

पोले पैरी न किसे नूं यार लभया ।
जिन्हू लबया खाना खराब करके ।।

इसलिये लक्ष्य की ऊँचाई पर पहुँचने के लिये हमारे गुरुओं ने पग-पग बढ़ाने के लिये पदमयी (सबद-शब्द) पौड़ियाँ बनाई हैं, जिनकी आधारशिलाएँ ये तत्त्व और सिद्धान्त हैं—

१. परमात्मा (Supreme soul)

'एक एव ईश्वरः' ब्रह्म एक है। इसी में भुक्ति-मुक्ति देने की शक्ति है, इसी के आदेश और निर्देश से संसार चलता है और विलय होता है। ब्रह्म एक है जो कर्ता-धर्ता-हर्ता, निर्भय, निर्वेद, अजर-अमर, अजन्मा और स्वयम्भू है। ओंकार के आगे लगे एक अंक को समझने वाला प्रभु के साथ एकाकार हो जाता है। अंग्रेजी का गॉड (God) शब्द भी यही दर्शाता है कि G–generator (जन्मदाता), O–observer (प्रेक्षक), D–destroyer (नाशक) केवल परमात्मा है।

२. आत्मा (Soul)

आत्मा, ईश्वर का अंश है और ईश्वर अंशी। आत्म-विजय ही विश्व-विजय का मूलमन्त्र है। आत्मोन्नति के लिये तीन साधन बताये गये हैं— १. सद्‌गुरु, २. सत्संग, ३. सत् नाम स्मरण (जप)।

यही कारण है कि आत्मबोध के लिये एक गुरुमुख प्रातः ब्राह्ममुहूर्त्त में 'जपुजी साहिब' और 'आसादीवार' पढ़ता है। 'सोदरु' का पाठ सायं और 'सोहिला' का पाठ शयन के समय तथा 'गगन में थाल' से आरती करता है। साधक का विश्वास है कि इस पाठ स्मरण से सत्य, सहनशीलता, सद्विचार, सद्‌गुण और उसकी सौहार्दता में वृद्धि होती है।

३. जीव (Creature)

प्राणी (व्यक्ति) स्वयं ईश्वर है जो जन्म से पावन और पवित्र है। शौच, सन्तोष, स्वाध्याय, तप और शरणागति (आत्मसमर्पण) आदि नैतिक आचरण से माया के आवरण को नष्ट करने के साथ वह, स्व-स्वरूप का साक्षात्कार कर लेता है। यह जीव तो शहंशाहों का भी शहंशाह है। सच तो यह है कि 'चैतन्य का अन्तःकरण में आभास ही 'जीव' है।

आत्म-साक्षात्कार हेतु गुरु नानकदेव ने ज्ञान और कर्म की तुलना में भक्ति (उपासना) को श्रेष्ठ माना है। आपकी मान्यता है कि श्रवण, मनन, निदिध्यासन से पुरुष-प्रकृति, जीव-जगत्, आत्मा-परमात्मा का वास्तविक बोध भक्ति द्वारा ही सुलभ है।

४. सृष्टि (Creation)

सृष्टि की रचना में गुरु नानकदेव जी ने अहंकार (हउमैं) को मूल कारण बताया है। ईश्वर ही पुरुष, प्रकृति, सत्त्व-रज-तम गुणों का कर्ता है। पुरुष केवल एक अकाल-पुरुष (ओंकार) है और शेष सृष्टि तो नारी है। भगवान् शंकराचार्य (अद्वैत) की मान्यता है कि ईश्वर ने माया के माध्यम से, महर्षि कपिल (सांख्य) का मत है कि प्रकृति-पुरुष के संयोग से एवं चार्वाक जड़ पदार्थों से सृष्टि का सृजन मानते हैं। इसी प्रकार 'कुरान' और 'बाइबिल' के भी अपने-अपने सिद्धान्त हैं।

५. गुरु (Teacher)

शान्ति के अगाध सागर ईश्वर का साक्षात्कार सच्चे गुरु के बिना न कोई कर सकता है और न ही कोई करा सकता है। 'गुरु' ईश्वर के मन का दर्पण होता

है जिसको पाकर शिष्य (भक्त) निहाल हो उठता है। ईश्वर को पाने के दो ही मार्ग गुरु नानकदेव जी ने बताये हैं— १. गुरु ज्ञान और २. प्रभु का अनुग्रह।

उर्दू भाषा में गुरु को मुर्शिद कहते हैं जिसमें चार अक्षर हैं— १. मीम– मुहब्बत, कृपा, २. रे– रियायत, तप, ३. शीन– शौक (रुचि), ४. दाल– दर्द अर्थात् कृपा करना। तप-जप में लगाना, मालिक के प्रति रुचि और दीन-दु:खियों के प्रति दर्द पैदा करने वाला ही सच्चा मुर्शिद (गुरु) होता है।

अंग्रेजी के टीचर शब्द का भी भाव यही है—

T— tender	दयालु
E— enduring	सहनशील
A— able	योग्य
C— colourless	पक्षपातहीन
H— honest	ईमानदार
E— errorless	निर्दोष
R— regulator	नियमित करने वाला

६. शब्द (Word)

ओंकार को ही शब्दब्रह्म कहा गया है। यह सच है कि—'सबसे बड़ा जगदीश का यह नाम ओंकार है।' इस शब्द को परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी वाणी से जानने का बड़े-बड़े योगी प्रयत्न करते हैं और अन्त में ठीक से जानने के बाद जीवन के चरम लक्ष्य (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं। गुरु नानक-देव जी ने इस शब्द निर्माण को एक रूपक के माध्यम से 'जपुजी साहिब' की ३८वीं पौड़ी (ए पौड़ी रब्ब दे घर दी ए) में बड़ी ही सहज-सरल विधि से समझाया है। आपने कहा है कि ऐसे शब्द का गठन (निर्माण) वही आत्मा करती है जिस पर प्रभु की अनुग्रह-दृष्टि होती है। इस शब्दब्रह्म (ओंकार) का ही सुफल है कि मुक्ति (Salvation) प्राप्त पुरुष निर्लिप्त हो जाता है, जिसके बारे में मुण्डकोपनिषद् (अ. २, खण्ड २, मण्डल ८) में कहा भी गया है—

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ।।

७. प्रार्थना (A prayer)

प्रार्थना में ईश्वर से अभ्यर्थना की जाती है— हे अकाल-पुरुष ! आप एकाधिपति हैं, आपकी रचनाओं से ही सम्पूर्ण संसार सुशोभित है। आपके हुक्म

(आदेश) के बिना संसार में कोई भी हलचल नहीं हो सकती। आपका यशोगान करने का सामर्थ्य किसी में नहीं, वेद भी आपकी प्रशंसा में नेति-नेति कहकर रुक जाते हैं। यह सच है कि इस राह पर चलने वालों की उल्टी ही रीति है, ये आँखें बन्द करते हैं परवर दिगार के दीदार के लिये। यही कारण है कि धर्म के रक्षक भी प्रभु, आपके अधीन हैं। दशम ग्रन्थ में धर्म की चार राजधानियाँ कही गयी हैं—

१. लोक, २. तीर्थ, ३. महात्मा और ४. ब्राह्मण।

बस, प्रभु मेरा शरीर, मन सब कुछ आपके अधीन है, क्योंकि आंप मेरे एकमात्र आश्रयस्थल हैं, कृपा कर इस जीव को अपनी शरण में लेकर चौरासी के चक्कर से मुक्त करने का वरदान दें। सुना है, जो तेरे प्रेम में जलता है वह अन्त में आफताब (सूर्य) हो जाता है। एक सन्त कवि ने ठीक ही कहा है—

"जिस मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द ।
मरके ही तो पाइये, पूरण परमानन्द ॥"

पट्टी (पट्टी)–इसमें गुरु नानकदेव की आध्यात्मिकता है।

ਪੈਂਤੀਸ-ਅਖਰੀ

ਧਨ ਪਟੀ ਉਹ ਕਲਮ ਧਨ, ਧਨ ਭਾਣ੍ਡਾ ਧਨ ਮਸ ।
ਧਨ ਲਿਖਾਰਿ ਨਾਨਕਾ ਜਿਸ ਨਾਮ ਲਿਖਾਇਆ ਸਚੰ ।।

पैंतीस-अखरी

धन्न पट्टी उह कलम धन्न, धन्न भाण्डा धन्न मस।
धन्न लिखारि 'नानका' जिस नाम लिखाआ सच ॥

੧- ਓਂ– ਓਅੰਕਾਰ ਸਰਬ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ੀ ।	१. ओ–ओंकार सरब प्रकाशी ।
੨- ਅ– ਆਤਮ ਸੁਧ ਅਕ੍ਰੈ ਅਬਿਨਾਸ਼ੀ ।	२. अ– आत्म सुध एकै अबिनाशी ।
੩- ੲ– ਈਸ਼ ਜੀਵ ਮੇਂ ਭੇਦ ਨ ਜਾਣੇ ।	३. इ– ईश जीव में भेद न जाणे ।
੪- ਸ– ਸਾਧ ਚੋਰ ਸਭ ਬ੍ਰਹਮ ਪਛਾਨੇ ।	४. स– साध चोर सउ ब्रह्म पछाणे ।
੫- ਹ– ਹਸਤੀ ਚੀਟੀ ਤ੍ਰਿਣ ਲੇ ਆਦੰ ।	५. ह– हस्ती चींटी तृन लै आदं ।
੬- ਕ– ਕਾਰਣ ਕਰਣ ਅਕਰਤਾ ਕਰੀਏ ।	६. क– कारन करन अकरता कहीए ।
੭- ਖ– ਖਾਨ ਪਾਨ ਕਛੁ ਰੂਪ ਨ ਦੇਖੰ ।	७. ख– खान पान कछु रूप न देखं ।
ਨਿਰ ਬਿਕਾਰ ਅਦ੍ਵੈਤ ਅਲੇਖੰ ।।	निर बिकार अद्वैत अलेखं ॥

੮- ਗ– ਗਾਤ ਗ੍ਰਾਮ ਸਭ ਦੇਸ ਦਿਸੰਤਰ ।
ਸਤਿ ਕਰਤਾਰ ਸਰਬ ਕੇ ਅੰਤਰ ।।
੯- ਘ– ਘਨ ਕੀ ਨਿਆਈ ਸਦਾ ਅਖੰਡਤ ।
੧੦- ਙ– ਙਿਆਨ ਬੋਧ ਪਰਮਾਤਮ ਪੰਡਤ ।
੧੧- ਚ– ਚਾਪ ਗਯਾਨ ਕਰਿ ਜਾਹਿ ਵਿਰਾਜੈ ।
੧੨- ਛ– ਛਾਯਾ ਦ੍ਵੈਤ ਸਗਲਉਠ ਭਾਜੈ ।
੧੩- ਜ– ਜਾਗਤ ਸੁਪਨ ਸਖੋਪਤ ਤੁਰੀਆ ।
ਆਤਮ ਭੂਪਤ ਕੀ ਏਹ ਪੁਰੀਆ ।।
੧੪- ਝ– ਝੁਨਤੂਕਾਰ ਅਨਹਦ ਘਨਘੋਰੰ ।
ਤ੍ਰਿਕੁਟੀ ਭੀਤਰ ਅਤਿ ਛਬ ਜੋਰੰ ।।
੧੫- ਞ– ਞਾਣਤ ਜੋਗੀ ਇਆ ਰਸ ਬਾਤਾ ।
੧੬- ਟ– ਟਾਰਨ ਭ੍ਰਮਣ ਅਘਨਕੀ ਸੈਨਾ ।
ਸਤਿਗੁਰ ਮੁਕਤਿ ਪਦਾਰਥ ਦੈਨਾ ।।
੧੭- ਠ– ਠਾਕਤ ਦੁਬਿਧਾ ਨਿਰਮਲਕਰਣੰ ।
੧੮- ਡ– ਡਾਰਿ ਸੁਧਾ ਮੁਖ ਅਪਦਾ ਹਰਣੰ ।
੧੯- ਢ– ਢਾਪਿਤ ਦ੍ਵੈਤ ਅੰਧੇਰੀ ਮਨਕੀ ।
੨੦- ਣ– ਣਾਸਤਿਗੁਰਭ੍ਰਮਤਾਸਭਤਨਕੀ ।
੨੧- ਤ– ਤਾਰਣ ਗੁਰੂਬਿਨਾ ਨਹਿ ਕੋਈ ।
ਸ਼੍ਰੁਤਿ ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ ਮਧਬਾਤ ਪਰੋਈ ।
੨੨- ਥ– ਥਾਨ ਅਦ੍ਵੈਤ ਤਬੀ ਜਾਇ ਪਰਸੈ ।
ਮਨ ਬਚ ਕਰਮ ਗੁਰੂ ਪਗ ਦਰਸੈ ।।
੨੩- ਦ– ਦਾਰਿਦ ਰੋਗ ਮਿਟੈ ਸਭ ਤਨਕਾ ।
ਗੁਰੁਕਰੁਣਾ ਕਰ ਹੋਵੈ ਮੁਕਤਾ ।।
੨੪- ਧ– ਧੰਨ ਗੁਰੁਦੇਵ ਮੁਕਤਿ ਕੇ ਦਾਤਾ ।
੨੫- ਨ– ਨਾਨਾ ਨੇਤ ਬੇਦ ਜਿਸ ਗਾਤੇ ।
੨੬- ਪ– ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਸਭ ਮਾਹਿ ਸਮਾਨਾ ।
ਸਾਂਤਿ ਸਿਧਾਂਤ ਕੀਓ ਬਖੇਯਾਨਾ ।।
੨੭- ਫ– ਫਾਸ ਕਟੀ ਦ੍ਵੈਤ ਗੁਰ ਪੂਰੇ ।
ਵਾਜੇ ਸਬਦ ਅਨਾਹਦ ਤੂਰੇ ।।

८. ग- गात ग्राम सभ देस दिसंतर ।
सति करतार सरब के अंतर ।।
९. घ- घन की निआई सदा अखण्डत ।
१०. ङ- गिआन बोध परमातम पंडत ।
११. च- चाप गयान करि जाहि विराजै ।
१२. छ- छाया द्वैत सगल उठ भाजै ।
१३. ज- जागत सुपन सखेपत तुरीआ ।
आत्म भूपत की एह पुरीआ ।।
१४. झ- झुनतूकार अनहद घनघोरं ।
त्रिकुटी भीतर अति छब जोरं ।।
१५. ञ- ज्ञानत जोगी इहा रस बाता ।
१६. ट- टारन भ्रमन अघनकी सेना ।
सतिगुरु मुकति पदारथ दैना ।।
१७. ठ- ठाकत दुबिधा निरमल करणं ।
१८. ड- डारि सुधा मुख अपदा हरणं ।
१९. ढ- ढापित द्वैत अंधेरी मनकी ।
२०. ण- नासति गुरभ्रमता सभ तन की ।
२१. त- तारन गुरु बिना नहि कोई ।
श्रुति स्मृति मधबात परोई ।।
२२. थ- थान अद्वैत तबी जाइ परसै ।
मंन बच करम गुरू पग दरसै ।।
२३: द- दारिद रोग मिटै सभतन का ।
गुरुकरुणा कर होवै मुकता ।।
२४. ध- धन गुरुदेव मुकति के दाता ।
२५. न- नाना नेत बेद जिस गाते ।
२६. प- पारब्रह्म सभ माहि समाना ।
सांति सिधान्त कीउ बखेयाना ।।
२७. फ- फॉस कटी द्वैत गुर पूरे ।
बाजे सबंद अनाहद तूरे ।।

੨੮- ਬ– ਬਾਣੀ ਬ੍ਰਹਮ ਸਾਥ ਭਯੇ ਮੇਲਾ ।	२८. ब- बाणी ब्रह्म साथ भये मेला ।
੨੯- ਭ– ਭੰਗ ਦ੍ਵੈਤ ਹਉ ਸਦਾ ਅਕੇਲਾ ।	२९. भ- भंग द्वैत हउ सदा अकेला ।
੩੦- ਮ– ਮਾਨ ਅਪਮਾਨ ਦੋਊ ਜਰ ਗਏ ।	३०. म- मान अपमान दोउ जर गये ।
ਜੋਊ ਥੇ ਸੋਊ ਪੁਨ ਭਏ ।।	जोऊ थे सोऊ पुन भए ।।
੩੧- ਯ– ਯਾ ਕਿਰਪਾ ਕਉ ਸੋਊ ਪਛਾਨੇ ।	३१. य- या कृपा कउ सोऊ पछाने ।
ਅਦ੍ਵੈਤ ਅਖੰਡ ਆਪ ਕਉ ਮਾਨੈ ।।	अद्वैत अखण्ड आप कउ मानै ।।
੩੨- ਰ– ਰਹਿ ਰਹੇ ਸਭ ਮਹਿ ਪੁਰਖ ਅਲੇਪੰ ।	३२. र- रहि रहे सभ महि पुरुष अलेपं ।
ਆਦਿ ਅਪਾਰ ਅਨਾਦ ਅਭੇਖੰ ।।	आदि अपार अनाद अभेखं ।।
੩੩- ਲ– ਲਿਵਲੀਨ ਭਏ ਆਤਮ ਮਧ ਐਸੇ ।	३३. ल- लिवलीन भए आतम मध ऐसे ।
ਜਿਉ ਜਲ ਜਲਹਿ ਭੇਦ ਕਰ ਕੈਸੇ ।।	जिउ जल जलहि भेद कर कैसे ।।
੩੪- ਵ– ਵਾਸਦੇਵ ਬਿਨ ਅਵਰ ਨ ਕੋਊ ।	३४. व- वासदेव बिन अवर न कोऊ ।
ਨਾਨਕ ਓਅੰ ਸੋਹੰ ਆਤਮ ਸੋਊ ।।	नानक ओम सोऽहं आत्म सोऊ ।।
੩੫- ੜ– ੜਾੜ ਮਿਟੀ ਆਤਮ ਦਰਸਾਨਾ ।	३५. ड़- ड़ाड़ मिटी आत्म दरसाना ।

ਮਾਤ੍ਰਾ—मात्रा

अ-आ—ਅ-ਆ (कन्ना)	ਾ	दान कर—ਦਾਨ ਕਰ
बिन्दी कन्ना (ਬਿੰਦੀ ਕਨਨਾ)	ਾਂ	कां नू उड़ा—ਕਾਂ ਨੂ ਉੜਾ
इकार—ਸਿਆਰੀ (सिआरी)	ਿ	इसदी गल सुण—ਇਸਦੀ ਗਲ ਸੁਣ
ईकार—ਬਿਹਾਰੀ (बिहारी)	ੀ	चीज़ का पता कर—ਚੀਜ਼ ਦਾ ਪਤਾ ਕਰ
उकार—ਔਂਕੜ (औंकड़)	ੁ	उठ कम कर—ਉਠ ਕਮ ਕਰ
ऊकार—ਦੁਲੈਂਕੜੇ (दुलैंकड़े)	ੂ	झूठ न बोल—ਝੂਠ ਨ ਬੋਲ
एकार—ਲਾਵਾਂ (लावा)	ੇ	देर न कर—ਦੇਰ ਨ ਕਰ
ऐकार—ਦੋਲਾਵਾਂ (दोलावां)	ੈ	वैर न कर—ਹੈਰ ਨ ਕਰ
ओकार—ਹੋੜਾ (होड़ा)	ੋ	सच बोल—ਸਚ ਬੋਲ
औकार—ਕਨੌੜਾ (कनौड़ा)	ੌ	मौज मार—ਮੌਜ ਮਾਰ
टिपी—ਟਿੱਪੀ (टिपी)	ੰ	बड़ा आदमी है—ਵੜਾ ਆਦਮੀ ਹੈ
बिन्दी—ਬਿੰਦੀ (बिन्दी)	ਂ	लोकां दे नाल मिल—ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਮਿਲ
इति स्वराक्षरी—		मुहारनी—ਮੁਹਾਰਨੀ

नानक नाम चढ़ती कला, तेरे भाणे सरबत दा भला।।

रामरङ्ग शर्मा

आमुख (मुख-बंध)

'जपुजी साहिब' के नाम से ही स्पष्ट है कि इस अमरवाणी का शब्द-सौकर्य, शब्द-सौष्ठव अपनी शब्द-शक्ति से 'शब्द-ब्रह्म' को अभिव्यक्त करने के लिये ही हुआ है। अकाल-पुरुष ब्रह्म का साक्षात्कार करने और कराने के लिये ही साधक सदा, सर्वदा सच्चे और शुद्ध तन-मन से क्रमशः एक-एक पौढ़ी (सोपान) की ओर पग बढ़ाता है। इस सतत साधना में लगा जीव यह जानता है कि मङ्गलाचरण के बिना मङ्गलमूर्ति को पाना असम्भव है। अतः वह ३८ पौढ़ियों की मंजिल पार करने के लिये सर्वप्रथम "१ ओंकार" मन्त्र का जप करता है। ऐसे जापक के बारे में सद्गुरु जी कहते हैं—

"धूड़ी मत्थे तिस गुरु सिख की,
जो आपु जपे अवरहि नाम जपाए ।।" (गुरुवाणी)

"जप" शब्द की निष्पत्ति व्याकरण-शास्त्र में जप् धातु से अच् प्रत्यय लगाने से होती है, जिसका सीधा-सादा अर्थ है—"जपतीति जपः" अर्थात् भक्त, अपनी भव्य-भावना से स्तुति करता हुआ अपनी गोमुखी (माला जपने को झोली) में अपने गोपाल स्वरूप सद्गुरु को बन्द कर लेता है। इसके पश्चात् उसे "नानक-देव" शब्द का अर्थ पता लगता है और आत्मबोध होता है कि "देव" किसे कहते हैं। न + अनकः = "नानकः"— अर्थात् जो पवित्र है और जिसमें किसी प्रकार का भी "अनक"— दोष-पाप नहीं है। "देव" शब्द का तो अर्थ स्पष्ट ही है—"दीव्यति—आनन्दमनुभवति सदा स देवः"। यह सब होता है प्रभु के जप से और अन्तः में भक्त (गुरुमुख), सलोक (सः + लोकः) अर्थात् उस मोक्ष लोक को प्राप्त कर लेता है।

सच्चा सौदा

सच्चा सौदा कोई जपी-तपी ही कर सकता है, जिसकी आत्मा सुनती है—"हे प्रकाश के स्रोत ! "प्राण" दे, प्राणपियारे के लिये, "सर" दे सरदार बन, अपने मुख से अज्ञान अन्धकार का आवरण (पर्दा) उठा, अपने आपको पहचान, "मैं" और "तुम" के भेद को जान, बस, तब जान जायगा जगदीश

को।" जीव और ब्रह्म के मिलन में सबसे बड़ी बाधा है "अहंकार", जिसके कारण "जीव" अपने को कर्ता मान बैठा है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी कहा है—

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ।। (गीता ३/२७)

मस्तिष्करूपी हारमोनियम-बाजा से अहंकार और तर्क (बुद्धिपरक) शब्द निकलते हैं "आत्मा" के कारण, किन्तु आत्मा इन दोनों से पूर्णरूप से निर्लिप्त है। बुद्धि (Intellect) और विवेचना (Consciousness) तो एक चिमटे की तरह हैं जो सांसारिक पदार्थों को तो पकड़ते हैं, परन्तु उनमें उन अँगुलियों को पकड़ने का सामर्थ्य नहीं है जिन्होंने बुद्धिरूपी चिमटे को पकड़ रखा है। जड़ (Unconscious) एवं चेतन (Conscious) नामक पदार्थों में जब तक जीव की रुचि बनी रहती है तब तक वह "सच्चा-सौदा" कर ही नहीं सकता चाहे वह कितना ही बाह्य सोच-विचार क्यों न करे। गुरु नानकदेव जी ने कहा भी है—

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार। (जपुजी, पौड़ी–१)

गुरु का जहाज

"जपुजी साहिब" वस्तुतः भव-सागर से सुगमता से पार उतारने वाला एक जहाज है जिसके खेवनहार ख़ुद "अकाल-पुरुष" गुरु परमात्मा हैं। इसकी पुष्टि व्यास जी ने भी की है—

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा।।
(श्रीमद्भागवत ११।२०।१७)

इस जहाज के पास केवल वही जीव जा सकता है जिसमें इस पोत (जहाज) के मालिक के गुण करुणा, दया, उदारता, निर्भीकता, समरसता आदि हों। देव की पूजा के लिये साधक को "देवो भूत्वा देवं यजेत्" की उक्ति चरितार्थ करनी पड़ती है। "धर्म" इस जहाज का आधार है जिसके बल पर अर्थ-काम-मोक्ष-रूपी व्यापार होता है। यही कारण है कि इस जहाज में चार खण्ड— (१) धर्मखण्ड, (२) ज्ञानखण्ड, (३) श्रम (लज्जा) खण्ड, (४) कर्मखण्ड हैं, जिनका विशद वर्णन भी 'जपुजी' में है, जिनके सुचारु संचालन के बाद ही जीव पाँचवें सच्च-खण्ड पर पहुँचता है। श्रवण-मनन और निदिध्यासन के माध्यम

से इस आध्यात्मिक यान को सुदृढ़ रखा जा सकता है। इस जहाज के चालक अकाल-पुरुष की आज्ञा का पालन आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। गुरु नानकदेव जी ने जपुजी में स्पष्ट रूप से कहा है कि जो प्रभु के आदेश का पालन करता है वह आवागमन में नहीं पड़ता—

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।। (जपुजी, पौड़ी-२)

इस कथन की पुष्टि मुण्डकोपनिषद् (२।२।८) में भी की गयी है।

सिद्धगोष्ठी (सिद्ध और गुरु नानकदेव)

गुरु नानकदेव जी (सन् १४६९-१५३८ ई.) ने अपने आचरण से यह सिद्ध कर दिया है कि भारतीय सांस्कृतिक एकता की आधारशिला इस देश की मिट्टी में है, जिसने इस भावनात्मक एकता को संगठित रखा है। इस भारत-भू को सन्तों ने अपने अमर सन्देशों से सँवारा और सुधारा है। यहाँ के लोक-साहित्य ने इसमें समानता, सहनशीलता और भाईचारे को सबल बनाया है। भारत की प्रान्तीय भाषाओं, विभिन्न भारतीय सम्प्रदायों, तीर्थ-त्योहारों, द्रविड और आर्यों ने जिस संस्कृति की नींव डाली, जैन-बौद्धों ने जिसे मजबूती प्रदान की, वैष्णव-शैवों ने जिसका विस्तार किया, नाथपन्थियों ने जिसकी घर-घर में अलख जगायी, सूफी और कबीर-पंन्थियों ने जिसका मार्ग प्रशस्त किया, उसी संस्कृति को गुरु नानकदेव ने अपनी सूझ-बूझ तथा विवेक और वैराग्य से (जीव और ब्रह्म की एकता का) एक विशाल स्वरूप प्रदान किया है, जो वेदान्त की प्रस्थानत्रयी—उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र का लक्ष्य भी है।

सम्पूर्ण "जपुजी साहिब" में नाथ-सम्प्रदाय (गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित) के सिद्धों द्वारा उठायी गयी विभिन्न शंकाओं और प्रश्नों का उत्तर दिया गया है। हिमालय पर्वत के मणि-शैल शिखर पर मत्स्येन्द्र नाथ और उनके नौ शिष्यों के साथ हुआ यह विचार-विनिमय केवल तत्त्वबोध के लिये ही है, विरोध के लिये नहीं। सहज भाव से अवधूत ने पूछा— आप क्या जप रहे हैं? श्री नानकदेव जी ने उत्तर दिया— "ओंकार" को जप रहा हूँ। इन प्रश्नों में मुख्य हैं—१. क्या बाह्य पवित्रता, मौन, सांसारिक पदार्थों या बाहरी बुद्धिमत्ता से आत्मसाक्षात्कार सम्भव है? सच्चा-सुच्चा बनने के लिये क्या करना चाहिए? परमात्मा अकथनीय और अवर्णनीय कैसे है? प्रभु की साधना के साधन (श्रवण-मनन-निदिध्यासन) क्या हैं? सृष्टि की रचना का प्रकार क्या

है? जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र? जगत् मिथ्या है या सत्य? धर्म-खण्ड, ज्ञान-खण्ड, श्रम-खण्ड, करम-(कर्म) खण्ड और सच्च-खण्ड क्या हैं? मुक्त का लक्षण क्या है?

ग्रन्थ का अनुबन्ध-चतुष्टय

जपुजी साहिब के अनुबन्ध-चतुष्टय को जानने से पहले जिज्ञासु पाठक को ये जान लेना चाहिए कि यह ग्रन्थ धर्म का सूत्रात्मक रूप है, जिसके श्रवण से उपनिषद् के शास्त्रबोध (शब्द) का, मनन से ब्रह्मसूत्र (मुक्तिबोध) के अनुमान का और निदिध्यासन से श्रीमद्भगवद्गीता के प्रत्यक्षबोध (योग) का बोध होता है। इन्हें दर्शनशास्त्र के हेतु रूप में भी माना गया है।

श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो मन्तव्यश्चोपपत्तिभिः।
मत्वा च सततं ध्येय एते दर्शनहेतवः ।।

अनुबन्धचतुष्टय में १. विषय, २. अधिकारी, ३. प्रयोजन, ४. परस्पर सम्बन्ध अर्थात् प्रतिपाद्य-प्रतिपादक विषय का वर्णन किया जाता है।

"जपुजी साहिब" का प्रतिपाद्य विषय है—"ब्रह्म-जीव का एकत्व", अधिकारी है—"निरंकार अकाल-पुरुष का विवेकी शिष्य", प्रयोजन है—"मोह-माया बन्धन से मुक्ति" और सम्बन्ध है—"प्रतिपाद्य (ब्रह्म) और प्रतिपादक (ग्रन्थ) का समन्वय", अर्थात् ग्रन्थ में जिस विषय को कहा गया है उसका मूल सिद्धान्त के साथ मेल है।

जपुजी का महत्त्व

भारतीय संस्कृति के स्वरूप की बाँकी झाँकी यदि कोई एक साथ देखना चाहता है तो उसे अवश्य ही क्रान्तिकारी, समाज-सुधारक जगद्गुरु श्री गुरु नानकदेव महाराज की अमर रचना "जपुजी" का अध्ययन करना चाहिए। इस कृति में गागर में सागर भरते हुए रचनाकार ने ऐसे मानव का चित्र खींचा है जो जाति-पाँति की संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठकर केवल सद्गुरु का दास है और समस्त जगत् को उसी परमपिता अकाल-पुरुष का क्रीड़ा-क्षेत्र मानता है। इसी आधार पर श्री गुरु नानकदेव जी ने "जपुजी" में एकत्व, भ्रातृभाव, सेवा, सरस, सरल और सादगी का जीवन व्यतीत कर आत्म-संयम तथा आत्म-चिन्तन का उपदेश दिया है। दूसरों की त्रुटियाँ, कमियाँ देखकर परस्पर द्वेष करने वालों को अपनी अनूठी-मीठी वाणी में गुरु

जी महाराज गुरुग्रन्थ साहिब में कहते हैं—**"हम नहिं चंगे, बुरा नहिं कोई"**, अर्थात् हम अच्छे नहीं हैं और संसार में कोई बुरा नहीं। अर्थात् अपने को अच्छा मत कहो और दूसरों को बुरा मत कहो। मानव को केवल अपने अवगुण देखने चाहिए और बिना भेद-भाव के जीव मात्र की सेवा करनी चाहिये; क्योंकि हम सबका पिता एक (करतार) है जो सत्य, शिव और सुन्दर है। सद्गुरु का हुक्म (आज्ञा) ही सर्वोपरि है, उसी के अधीन सब कुछ है।

धर्मतत्त्व के अंशों का संक्षेप में चित्रण जैसा "जपुजी" में हुआ है उसका दर्शन अन्यत्र यदि दुर्लभ नहीं, तो कठिन अवश्य है। विचार के साथ आचार (आचरण) का मेल ही वस्तुतः जीवन की सच्ची संस्कृति है। विचार की दृष्टि से अपने मन के सभी द्वार खुले रखते हुए इस रचना का मनन, चिन्तन करने पर आप सर्वत्र पायेंगे—अपने मूल मन्त्र का मंगलाचरण। "१ ओंकार सति नाम" के बाद ३८ पौड़ियाँ और अन्तिम उपसंहाररूपी सलोक (श्लोक) "पवणु गुरुवाणी पिता" के साथ ४० संख्या वाले इस सूत्रात्मक ग्रन्थ में धर्म के सभी तत्त्वों का सन्निवेश कर **"मन्त्रद्रष्टारः ऋषयः"** अर्थात् मानव जाति के कल्याणार्थ मन्त्रों का दर्शन करने वाले ऋषियों की पदवी श्री गुरु नानकदेव जी ने अनायास ही प्राप्त कर ली है। यही कारण है कि हम अपने सभी कार्यों में सत्संकल्प करते हुए अपने आदि सद्गुरु महाराज का स्मरण करते हुए कहते हैं—**"नानक नाम चढदी कला तेरे भाणे सरबत दा भला"**। श्रवण, मनन और ध्यान की जिस त्रिवेणी में स्नान करने का उपदेश "जपुजी" में दिया गया है, उसकी तुलना अन्यत्र नहीं की जा सकती। सत्य के महत्त्व को समझने के लिये, अहंकार को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये कहा गया है। भगवान् की प्राप्ति हेतु गुरु की शरणागति को यहाँ आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी कहा गया है। क्योंकि इसके बिना साधक, धर्म-ज्ञान-कर्म और सच्चखण्ड तक नहीं पहुँच सकता। श्री गुरुग्रन्थ साहिब का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद करने वाले पाश्चात्त्य विद्वान् डॉ. अर्नेस्टट्रम्प के इस कथन से हम पूर्ण रूप से सहमत हैं—"श्री गुरु नानकदेव जी के उपदेश, भारतीय वाङ्मय की एक अनूठी निधि हैं, अनुभव और सर्वोत्तम ज्ञान की पराकाष्ठा हैं, जिन्हें शुद्ध आचरण, दर्शन और मानवीय धर्मों का एक गुलदस्ता ही नहीं, अपितु उपवन कहा जा सकता है"। "जपुजी साहिब" के महत्त्व और माहात्म्य (ਮਹਾਤਮ) के सम्बन्ध में कहा गया है— इसे प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में अवश्य पढें।

यह सच है कि गुरु नानकदेव जी एक पारस मणि की तरह रहे हैं, जिसे भी उन्होंने स्पर्श किया उसका जीवन चमचमाता सोना-सा बन गया। आपका जीवन सूर्य, चन्द्र और हवा की तरह था जिसने बिना भेदभाव के सभी को प्रकाश, शीतलता और गति प्रदान की। ब्रह्मनिष्ठ गुरु महाराज की महिमा कौन गायन कर सकता है? क्योंकि उनके प्रति पदन्यास में जीवन, रोम-रोम में शिक्षा, व्यवहार में त्याग, तपस्या और बात-बात में आध्यात्मिक रहस्य झलकता था। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

ज्यों केले के पात में, पात पात में पात ।

त्यों सन्तन की बात में, बात बात में बात ।।

सच्चे गुरु के सम्बन्ध में कहा गया उर्दू का यह शेर भी गुरु नानकदेव महाराज के बारे में अक्षरशः घटता है—

मुर्शिद वही है जो आसूदाय मंजिल कर दे ।

वरना रस्ता तो हर शख्स बता देता है ।।

मानव के कल्याण हेतु अपने सिखों (शिष्यों) को किरत करनी (मेहनत), वण्ड छकना (बाँट कर खाना) और प्रभु का नाम सदा स्मरण करने का आदेश, उपदेश देने वाली अनन्त शक्ति विभूषित परम ज्योति श्री गुरु नानकदेव महाराज की अमर रचना, "जपुजी" पर कुछ लिखने का साहस मेरे जैसे व्यक्ति का दुःसाहस मात्र ही है। आशा है, ज्ञानी, ध्यानी, विद्वान् लोग मेरी त्रुटियों की ओर ध्यान न देकर मेरे भावों की ओर दृष्टिपात कर मुझे अनुगृहीत करेंगे। "जपुजी" का भावार्थ लिखते समय मुझसे विषयगत, भावगत और भाषागत त्रुटियों का होना भी सम्भव है। सभी ज्ञानी, ध्यानी, गुरुमुखों से विनम्र निवेदन है कि वे मेरी अज्ञानता, अल्पज्ञता पर नहीं मेरी भावना पर ध्यान देंगे जिसके भरोसे मैंने तेजोराशि, महोज्ज्वल यशस्वी, पुण्यश्लोक परमाराध्य श्री सद्गुरु गुरु नानकदेव के (अधीति, बोध, आचरण, प्रचारण के) सम्बन्ध में कुछ लिखकर केवल अपनी वाणी को पवित्र करने का प्रयास किया है। नैषधकार महाकवि श्रीहर्ष के शब्दों में मेरी भी आस्था है कि सद्गुरु नानकदेवं महाराज की यह पवित्र गाथा, मेरी इस त्रुटिपूर्ण वाणी को भी "**स्वसेविनीमेव पवित्रयिष्यति**"। मुझे विश्वास है कि "जपुजी" के पाठ-जाप से जनमानस में जागृति (Awakening), पवित्रता (Purification), एकता (Hormony), निष्कपटता (Honesty), भाईचारा (Fraternity), भक्ति (Allocation) के भाव पल्लवित, पुष्पित और विकसित

होंगे। सद्‌गुरु नानकदेव जी की रचनाएँ, उनके द्वारा प्रतिपादित तत्त्व और सुधार सदा मानव जीवन के मार्गदर्शक रहे हैं और भविष्य में भी सदा रहेंगे। जपुजी में कहा भी गया है—

नानक भगता सदा विगासु ।
सुणिऐ दूख पाप का नासु ।। —पौड़ी-१०

श्री गुरु नानकदेव की रचनाएँ–

१. **जपुजी साहिब**	प्रातः ब्राह्म मुहूर्त्त में पढ़ा जाता है।
२. **आसादीवार**	प्रातः ब्राह्म मुहूर्त्त में पढ़ा जाता है।
३. **सोदरु**	सायं सन्ध्या के समय पढ़ा जाता है।
४. **रहिरास**	भोजन के समय पढ़ा जाता है।
५. **सोहिला**	रात्रि को शयन के समय पढ़ा जाता है।
६. **गगन में थाल**	यह अकाल-पुरुष की आरती है।

श्री गुरु नानकदेव द्वारा प्रतिपादित तत्त्व–

१. ओंकार (ब्रह्म)
२. बीजमन्त्र (वाहिगुरु)
३. आत्मा
४. सृष्टि
५. अहंकार
६. जीव
७. माया
८. मन
९. हरिपद प्राप्ति पथ
१०. सद्‌गुरु
११. सत्संग
१२. शब्द
१३. नाम
१४. जप

श्री गुरु नानकदेव के सुधार–

१. बाह्य आडम्बर का विरोध
२. सामाजिक कुरीतियों को दूर करना
३. एकेश्वरवाद का प्रचार
४. अन्याय और दमन का विरोध

५. जन-मानस में आशा का संचार

६. आर्य-अनार्यों में एकता का प्रयास

७. सर्वधर्म-समन्वय स्थापना आदि।

सिखधर्म के कतिपय सर्वमान्य ग्रन्थ–

१. श्री गुरुग्रन्थ साहिब

२. श्री दशमग्रन्थ साहिब

३. श्री सूरज प्रकाश

४. श्री पन्थ प्रकाश

कतिपय नित्यनेम ग्रन्थ–

१. श्री जपुजी साहिब

२. श्री सुखमनी साहिब

३. श्री दु:खभंजनी साहिब

४. श्री जापुजी साहिब

प्राचीन प्रामाणिक लेखक–

१. भाई गुरुदास जी

२. भाई नन्दलाल जी

३. भाई सन्तोष सिंह जी

अध्ययन केन्द्र–

१. शिरोमणि गुरुद्वारा, अमृतसर (पंजाब)

२. सिख मिशनरी कॉलेज, लुधियाना (पंजाब)

३. भैणी साहिब दरबार, लुधियाना (पंजाब)

४. इन्स्टीच्यूट ऑफ गुरुजन, लाजपतनगर (दिल्ली)

५. गुरुवाणी अध्ययन केन्द्र, गुरुबाग, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

६. श्री सद्‌गुरु रामसिंह शोध-पीठ, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

७. पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला (पंजाब)

मानवता के आलोकपुञ्ज गुरुओं का संक्षिप्त विवरण

वेदीवंश

श्री गुरु नानकदेव जी (आदिगुरु)

प्रकाश-स्थान : तलवंडी ननकाना साहिब (इस समय पाकिस्तान में)
जन्म-तिथि : कार्तिक पूर्णिमा, संवत् १५२६ (सन् १४६९ ई.)
पिता : श्री मेहता कालू (कल्याण राय) वेदी
माता : तृप्ता कौर जी
बहन : नानकी जी
सन्तान : बाबा श्रीचन्द्र, श्री लक्ष्मीचन्द जी
सच्चखण्ड : करतारपुर आश्विन शुक्ल १०, सं. १५९६ (५ सितम्बर, १५३९ ई.)
शासनकाल : बाबर और इब्राहिम
जीवन अवधि : ६९ वर्ष, १० मास, १० दिन।

श्री गुरु अंगददेव जी

प्रकाश-स्थान : मतेकरा (माता की सराय), फिरोजपुर
जन्म-तिथि : वैशाख शुक्ल ५, संवत् १५६१ (३१ मार्च, १५०४ ई.)
पिता : श्री फेरुमल जी
माता : सभराई (दइया कौर जी)
पत्नी : रवीवी कौर जी
सन्तान : श्री दातू, दासू, बीबी अमरो, बीबी अनोखी
गद्दी : १७ आषाढ़ (सन् १५३९)
सच्चखण्ड : कण्डूर साहिब (अमृतसर) २६ मार्च, सन् १५५२ ई.
शासनकाल : हुमायूँ, शेरशाह सूरी
जीवन अवधि : ४८ वर्ष।

३. श्री गुरु अमरदास जी

प्रकाश-स्थान : ग्राम बासारके साहिब (अमृतसर)

जन्म-तिथि : वैशाख शुक्ल १४ सं. १५३६ (५ मई, अर्द्धरात्रि के बाद, सन् १४७९ ई.)

पिता : श्री तेजभान जी

माता : सुलखनी कौर जी

पत्नी : मन्सा (रामकौर जी)

सन्तान : मोहन जी, मोहनी, बीबी भानी, बीबी दानी

गद्दी : चैत्र शुक्ल ४, सं. १६०९ (२९ मार्च, सन् १५५२ ई.)

सच्चखण्ड : गोइंदवाल साहिब, १ सितम्बर सन् १५७४ ई.

शासन : हुमायूँ, अकबर

जीवन अवधि : ९५ वर्ष, ३ मास, २६ दिन।

सोढीवंश

श्री गुरु रामदास जी

प्रकाश-स्थान : चूना मण्डी, लाहौर (पाकिस्तान)

जन्म-तिथि : कार्तिक कृष्ण २ संवत् १५९१ (सन् १५३४ ई.)

पिता : हरिदास मल्ल जी

माता : दया कौर जी

पत्नी : भानी कौर जी

सन्तान : श्री पृथ्वीचन्द, महादेव, गुरु अर्जुनदेव जी

गद्दी : संवत् १६३१ (सन् १५७४ ई.)

सच्चखण्ड : गोइंदवाल भाद्रपद शुक्ल ३ सं. १६३८ (१५८१ ई.)

शासन : अकबर

जीवन अवधि : ४६ वर्ष, १० मास, १६ दिन।

श्री गुरु अर्जुनदेव जी

प्रकाश-स्थान	:	गोइंदवाल साहिब, अमृतसर
जन्म-तिथि	:	वैशाख शुक्ल ७, संवत् १६२० (१५ अप्रैल, १५६३ ई.)
पिता	:	गुरु रामदास जी
माता	:	भानी कौर जी
पत्नी	:	गंगा कौर जी
सन्तान	:	हरिगोविन्द साहिब
गद्दी	:	संवत् १६३८ (सन् १५८१)
सच्चखण्ड	:	डेरा साहिब (लाहौर, पाकिस्तान) ३० मई, १६०६ ई. (प्रथम शहीदी)
शासन	:	जहाँगीर
जीवन अवधि	:	४३ वर्ष, १ मास, १५ दिन।

श्री गुरु हरिगोविन्द जी

प्रकाश-स्थान	:	बड़ाली साहिब (अमृतसर)
जन्म-तिथि	:	आषाढ कृष्ण संवत् १६५२ (१४ जून, १५९५ ई.)
पिता	:	गुरु अर्जुनदेव जी
माता	:	गंगा कौर जी
पत्नी	:	दामोदरी कौर, महादेवी, नानकी जी
सन्तान	:	गुरुदित्ता, सूर्यमल, अणीराय, गुरु तेगबहादुर, बीबी वीरो।
गद्दी	:	संवत् १६६३ (३० मई, १६०६ ई.)
सच्चखण्ड	:	करतारपुर (जालन्धर), ३ अप्रैल, १६४४ ई.
शासन	:	जहाँगीर, शाहजहाँ
जीवन अवधि	:	४८ वर्ष, ८ मास, १९ दिन।

श्री गुरु हरिराय जी

प्रकाश-स्थान	:	कीरतपुर (होशियारपुर)
जन्म-तिथि	:	माघशुक्ल १३, संवत् १६८७, (२६ जनवरी १६३० ई.)

पिता : गुरुदित्ता जी
माता : निहाल कौर जी
पत्नी : प्रेमकौर, चन्दकौर, अनोखी, रामकौर, लाहली, कृष्णा कौर, कल्याणी कौर
सन्तान : श्री रामराय, गुरु श्री हरिकृष्ण जी
गद्दी : संवत् १७०१ (मार्च १६४४ ई.)
सच्चखण्ड : कीरतपुर, ६ अक्टूबर १६६१ ई.
शासन : शाहजहाँ, औरंगजेब
जीवन अवधि : ३१ वर्ष, ८ मास, १० दिन।

श्री गुरु हरिकृष्ण जी (हरिकिशन)

प्रकाश-स्थान : कीरतपुर
जन्म-तिथि : श्रावण कृष्ण ८ संवत् १७१३ (७ जुलाई, १६५६ ई.)
पिता : हरिराय जी
माता : कृष्णा कौर जी
पत्नी : (अविवाहित)
गद्दी : संवत् १७१८ (७ अक्टूबर १६६१ ई.)
सच्चखण्ड : नई दिल्ली ३० मार्च, १६६४ ई.
शासनकाल : औरंगजेब
जीवन अवधि : ७ वर्ष, ८ मास, २३ दिन।

श्री गुरु तेगबहादुर जी

प्रकाश-स्थान : गुरु का महल करतारपुर (अमृतसर)
जन्म-तिथि : वैशाख कृष्ण ५ संवत् १६७८ (१ अप्रैल, १६२१ ई.)
पिता : गुरु हरिगोविन्द जी
माता : नानकी जी
पत्नी : माता गुजरी जी

सन्तान : गुरु गोविन्द सिंह जी
गद्दी : संवत् १७२१ (३० मार्च १६६४ ई.)
सच्चखण्ड : चाँदनी चौक, नई दिल्ली, ११ नवम्बर, १६७५ ई.
शासनकाल : औरंगजेब
जीवन अवधि : ५४ वर्ष, ७ मास, १० दिन।

श्री गुरु गोविन्द सिंह जी

प्रकाश-स्थान : श्री पटना साहिब (बिहार प्रान्त)
जन्म-तिथि : पौष शुक्ल ७, संवत् १७२३
(२२ दिसम्बर, १६६६ ई.)
पिता : गुरु तेगबहादुर जी
माता : माता गुजरी जी
पत्नी : माता जीतो, माता सुन्दरी, माता साहिबदेवां
सन्तान : अजीतसिंह, जुझार सिंह, जोरावर सिंह, फतेह सिंह
गद्दी : संवत् १७३२ (११ नवम्बर, १६७५)
सच्चखण्ड : नान्देड़ साहिब (महाराष्ट्र) १७०८ ई.
जीवन अवधि : ४१ वर्ष, ९ मास, २८ दिन।

नामधारी-वंश

श्री सद्गुरु बालक जी

प्रकाश-स्थान : मरवाला पोहोहार, जिला अटक
जन्म-तिथि : संवत् १८४१ (सन् १७८४ ई.)
पिता : दयाल सिंह जी
माता : भागभरी जी
पत्नी : तोती जी
गद्दी : सन् १८१२
सच्चखण्ड : ६ दिसम्बर, १८६२ ई.
शासन : अंग्रेजों का।

श्री सद्गुरु रामसिंह जी

प्रकाश-स्थान : पिण्ड राईंआ, लुधियाना (पंजाब)

जन्म-तिथि : माघ शुक्ल ५ (वसन्तपंचमी) संवत् १८७२ (सन् १८१६ ई.)

पिता : जसा सिंह जी

माता : सदा कौर जी

पत्नी : जंसा कौर जी

सन्तान : बीबी नन्दा जी, बीबी दया कौर जी

भाई : बुधसिंह जी (सद्गुरु हरिसिंह जी)

बहनें : बीबी राम कौर, बीबी साहिब कौर जी

गद्दी : संवत् १८९८ (सन् १८४१ ई.)

सच्चखण्ड : १८८७-१८८८ दर्ज है।

श्री सद्गुरु हरिसिंह जी

प्रकाश-स्थान : भैणी साहिब लुधियाना

जन्म-तिथि : संवत् १८७६ (सन् १८१९ ई.)

पिता : बाबा जसा सिंह जी

माता : सदा कौर जी

पत्नी : साहिब कौर, जीवन कौर जी

सन्तान : गुरुप्रताप सिंह जी, निहाल सिंह जी, गुरु दयाल सिंह जी, बीबी भागो, बीबी मताओ जी।

गद्दी : १७ जनवरी, १८७२ ई.

सच्चखण्ड : १७ मई, १९०६ ई.।

श्री सद्गुरु प्रतापसिंह जी

प्रकाश-स्थान : भैणी साहिब, लुधियाना

जन्म-तिथि : संवत् १९४६ (९ मार्च, १८९० ई.।

पिता : गुरु हरिसिंह जी

माता : जीवन कौर जी

पत्नी : भूपिन्द्र कौर जी
सन्तान : श्री सद्‌गुरु जगजीत सिंह जी, वीर सिंह जी
गद्दी : संवत् १९६३ (१७ मई, १९०६ ई.)
सच्चखण्ड : संवत् २०१४ (२१ अगस्त, १९५९ ई.)।

श्री सद्‌गुरु जगजीत सिंह जी

प्रकाश-स्थान : श्री भैणी साहिब, लुधियाना
जन्म-तिथि : २२ नवम्बर, १९२० ई., प्रातः ४ बजे
पिता : सद्‌गुरु प्रतापसिंह जी
माता : भूपिन्दर कौर जी
पत्नी : राजिन्द्र कौर जी, चन्द कौर जी
सन्तान : साहिब कौर (बीबा जी)
गद्दी : संवत् २०१४ (२१ अगस्त, १९५९ ई.)।

नोट— नामधारी वंश परम्परा का दृढ़ विश्वास है कि "गुरुदीप" कभी बुझता नहीं, अपितु गुरु नानकदेव जी की निरंजनी ज्योति ही अपने उत्तराधिकारी के देह में समाहित होकर उसमें देवत्व की स्थापना सदा कर देती है।

सिखी के कतिपय मुख्य तीर्थस्थल

१. ननकाना साहिब (पाकिस्तान), रावी नदी का तट, जहाँ गुरु नानकदेव अवतरित हुए।

२. पञ्जा साहिब (पाकिस्तान), लाहौर से पेशावर जाने वाले मार्ग में स्थित जहाँ श्री गुरु नानकदेव ने कन्धारी को शिक्षा दी थी।

३. श्री अमृतसर साहिब—व्यास नदी के तट पर स्थित है। यहाँ १३ प्रसिद्ध गुरुद्वारे हैं, जिनमें पावन स्वर्णमन्दिर मुख्य है, जिसे गुरु अर्जुनदेव जी ने स्थापित किया।

४. तरनतारन साहिब—व्यास-सतलज संगम पर स्थित है। इसे श्री गुरु अर्जुन-देव जी ने प्रतिष्ठापित किया।

५. हेमकुण्ड साहिब—हिमालय, जहाँ गुरुगोविन्द सिंह महाराज ने तप किया। यह स्थान बदरिकाश्रम के भी आगे है।

६. पटना साहिब (हरिमन्दिर)—बिहार प्रान्त की राजधानी पटना शहर के चौक के पास स्थित है। यहीं दशमेश पिता अवतरित हुए थे।

७. नान्देड़ साहिब—महाराष्ट्र प्रान्त में काचीगुड़ा-मनमाड लाइन पर स्थित, गोदावरी नदी के तट पर विराजमान यह स्थान है जहाँ सर्वस्व दानी श्री गुरु गोविन्द सिंह महाराज ने सच्चखण्ड (स्वर्ग) को प्रयाण किया था। ऐसी मान्यता है।

८. गोइंदवाल साहिब—व्यास नदी के तट पर स्थित है। यहीं गुरु अमरदास और गुरु रामदास जी ने सच्च खण्ड को प्राप्त किया और गुरु अर्जुनदेव यहीं अवतरित हुए।

९. ब्रह्मकुण्ड साहिब—अयोध्या में स्थित है, यहीं से गुरु गोविन्द सिंह जी ने श्रीराम-जन्मभूमि को मुक्त कराने का अभियान चलाया था।

१०. करतारपुर साहिब—यहीं गुरु नानकदेव और गुरु हरिगोविन्द जी ने सच्चखण्ड प्राप्त किया।

११. गुरुबाग एवं बड़ी संगत गुरुद्वारा (नीचीबाग), काशी में, जहाँ क्रमशः गुरु नानक देव जी महाराज और भारत की चादर गुरु तेगबहादुर जी पधारे थे।

राष्ट्रीय एकता तथा स्वतन्त्रता हेतु

पूर्व	पश्चिम	उत्तर	दक्षिण	भैणी साहिब
पटना साहिब (बिहार)	अमृतसर साहिब (पंजाब)	हेमकुण्ड साहिब (उत्तर प्रदेश)	नान्देड साहिब (महाराष्ट्र)	लुधियाना (पंजाब)

१२. कीरतपुर साहिब—गुरु हरिराम और गुरु हरिकृष्ण की अवतारभूमि।

१३. शीशगंज साहिब—नई दिल्ली, चाँदनी चौक, यहीं भारत की चादर गुरु तेगबहादुर जी ने हिन्दू और हिन्दुस्तान की रक्षा हेतु शीश-दान सन् १७७५ ई. को किया।

१४. भैणी साहिब दरबार—लुधियाना, पंजाब। यह वह पवित्र स्थान है जहाँ से सद्गुरु रामसिंह महाराज ने १८५७ ई. में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध कूकों को तैयार किया और गौ, गरीब की रक्षा के साथ अंग्रेजियत के बहिष्कार की घोषणा की। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में 'सद्गुरु रामसिंह पीठ' को इसी दरबार के वर्तमान सद्गुरु श्री जगजीतसिंह महाराज ने सन् १९९६ में स्थापित किया है, जिसमें सद्गुरुओं पर शोध-कार्य चल रहा है।

श्री जपुजी की प्रश्नावली

१. "जपुजी" में ओंकार से पहले लगाये गये १ अंक का उद्देश्य सप्रमाण स्पष्ट कीजिए?

२. "गुरुप्रसादि" के इस मन्त्र के पूर्व अकालपुरुष के लिये लगाये गये सात विशेषणों का क्या तात्पर्य है?

३. सच्चे आत्मबोध के लिये श्री गुरु नानकदेव जी ने किसे अनिवार्य माना है?

४. श्रवण, मनन, निदिध्यासन को जीवन्मुक्ति हेतु गुरु नानकदेव जी ने आवश्यक क्यों कहा है?

५. साधना के लिये धर्म, ज्ञान, श्रम, कर्म और सच्चखण्ड में से आप किसे श्रेष्ठ मानते हैं?

६. "असंख निंदक सिरि करहि भारु" जपुजी की १८वीं पौड़ी में सद्‌गुरु जी ने निन्दक को इतना बुरा क्यों कहा है?

७. "जपुजी" और "रैदास" शब्दों का अर्थ स्पष्ट करते हुए यह भी स्पष्ट करें कि "जपुजी" प्रातः और "रैदास" सायं पढ़ने को क्यों कहा गया है?

८. पवन को गुरु, पानी को पिता और धरती को माता क्यों कहा गया है? इसे विस्तार से समझाइये ?

९. "जपुजी" साहिब को गुरुग्रन्थ का मुख-द्वार क्यों कहा जाता है?

१०. निम्नलिखित शब्दों में से व्युत्पत्तिपूर्वक किन्हीं पाँच पदों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—गुरु, गुरुमुख, गुरुमुखी, नानक, निराकार, शिष्य (सिख), सत्य, हुकुम, आदेश, नाम, शब्द।

११. "जपुजी" में ६८ तीर्थों के स्थान का उल्लेख १०वीं पौड़ी में है, ये तीर्थ कहाँ और कौन से हैं?

१२. सम्प्रदाय शब्द का अर्थ बताते हुए—उदासी सम्प्रदाय, निर्मल सम्प्रदाय, नामधारी सम्प्रदाय, सुथराशाही सम्प्रदाय, सेवापन्थी सम्प्रदाय, अकाली सम्प्रदाय में से किन्हीं दो पर प्रकाश डालिये ?

१३. गुरु नानकदेव द्वारा प्रतिपादित तत्त्वों पर एक लघु निबन्ध लिखिए ?

१४. गुरु नानकदेव जी की रचनाओं का नामोल्लेखपूर्वक परिचय दीजिए ?

१५. "जपुजी" के आधार पर सृष्टि-उत्पत्ति पर युक्तियुक्त प्रकाश डालिये ?

१६. धरती को धर्मशाला ३४वीं पौड़ी में कहा गया है, इसे सिद्ध कीजिए ?

१७. "जपुजी" का निबन्ध-चतुष्टय क्या है ? इसे सोदाहरण समझाइये ?

१८. गुरु नानकदेव जी और सिद्धों का वार्तालाप कहाँ, कब और क्यों हुआ ?

धन्यवाद (ਧੰਨਵਾਦ)

सर्वप्रथम मैं कृतज्ञ हूँ उस करुणावरुणालय अकालपुरुष का, जिसके कृपाकटाक्ष से मुझे इस पावन कार्य करने का सुअवसर मिला। मैं साभार वन्दन करता हूँ भैणी साहिब दरबार के वर्तमान **श्री सद्गुरु जगजीत सिंह** महाराज के श्रीचरणों में, जिन्होंने मेरे जैसे अल्पज्ञ को अपने पीठ का निदेशक बनाने का अनुग्रह किया है। भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा के उत्थान में अहर्निश बद्धपरिकर **डॉ. मण्डन मिश्र**, कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय को कैसे धन्यवाद दूँ, क्योंकि इनकी अहेतुकी कृपा सदा मुझ पर रही है। अपने अनुज माँ सरस्वती के वरदपुत्र **डॉ. हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी**, प्रकाशनाधिकारी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय को धन्यवाद देने की धृष्टता मैं नहीं करूँगा, क्योंकि मैंने उन्हें अपने से भिन्न कभी नहीं माना, हाँ इनके सभी सहयोगियों को साधुवाद अवश्य देता हूँ, जो इनके आदेश पालन में सदा तत्पर रहते हैं। इस कार्य में समय-समय पर राह दिखाने वाले महन्त रघुवीर सिंह शास्त्री जी, प्रबन्धक, संगत लाहौरी टोला संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी का हृदय से आभारी हूँ। इसी क्रम में मैं इस ग्रन्थ के उत्कृष्ट एवं यथासमय शीघ्र मुद्रण के लिए श्रीजी-मुद्रणालय के व्यवस्थापकं शिष्यकल्प **श्री अनूप कुमार नागर** को आशीर्वादपूर्वक धन्यवाद देता हूँ।

इस अवसर पर गुरु घर के लिये तन-मन-धन से समर्पित दानवीर **सरदार अजीत सिंह सभ्भरवाल**, संरक्षक, गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, वाराणसी तथा सच्चखण्डवासिनी हमारी मातृकल्पा श्रीमती सभ्भरवाल का मैं सदा कृतज्ञ रहूँगा, जिन्होंने सर्वप्रथम मुझे 'जपुजी साहिब' तथा श्री सद्गुरुओं के सम्बन्ध में लिखने को प्रोत्साहित किया। अकाल-पुरुष से प्रार्थना है कि श्री सभ्भरवाल जी का परिवार सदा गुरुमत के प्रचार-प्रसार में लगा रहे। हे दुख:भंजन ! बस आपसे हमारी यही प्रार्थना है, हे हरि, तुम सबसे बड़े हो, अत: हमें आप अपनी शरण में रख लो—

"हम गरीब मसकीन प्रभु तेरे,
हरि राखु राखु वड़ वड़ा है।"

गुरुपूर्णिमा, संवत् २०५५
९ जुलाई, सन् १९९८

कृपापात्र
रामरङ्ग शर्मा

अधीतिः

(अध्ययन)

ਮੂਲ ਮੰਤਰ

੧ ੴ ਸਤਿਨਾਮੁ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰਭਉ ਨਿਰਵੈਰੁ
ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ।।

मूलमन्त्र

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ।।

संगति–

अकाल-पुरुष (ब्रह्म) का स्वरूप क्या है और उसे कैसे जाना जा सकता है?

शब्दार्थ–

ਕਰਤਾ (करता) = करने वाला। ਪੁਰਖੁ (पुरखु) = चेतन, पुरुषार्थ करने वाला। ਨਿਰਭਉ (निरभउ) = निर्भय, भयरहित। ਨਿਰਵੈਰ (निरवैर) = वैररहित। ਅਕਾਲ (अकाल) = कालातीत, जो काल के अधीन नहीं। ਮੂਰਤਿ (मूरति) = स्वरूप। ਅਜੂਨੀ (अजूनी) = जन्मरहित। ਸੈਭੰ (सैभं) = स्वयं प्रगट होने वाला। ਗੁਰ (गुर) = गुरु महाराज। ਪ੍ਰਸਾਦਿ (प्रसादि) = कृपा, प्रसन्नता।

भावार्थ–

'जपुजी साहिब' में कुल ४९८३ अक्षर हैं, जिनमें सर्वप्रथम १ ओंकार के आगे लगा १ अंक जिज्ञासा का कारण बनता है कि गुरु नानकदेव जी ने ओंकार के पहले १ अंक क्यों लगाया है? उत्तर स्पष्ट है कि जपुजी साहिब के मन्त्रद्रष्टा गुरु नानकदेव की पूर्ण आस्थां शुद्ध अद्वैतवाद और एकेश्वरवाद में है। 'जपुजी' के पाठ में बिना भेदभाव कें सभी आस्तिक, मर्यादित नर, नारी

को एक-सा अधिकार है, यह भी १ अंक से द्योतित होता है। ओंकार में अ-उ-म् तीन मात्राएँ हैं जिनमें 'अकार' मात्रा, विराट् ईश्वर और विश्व नामक जीव का बोध कराती है, 'उकार' मात्रा हिरण्यगर्भ ईश्वर और तैजस् नामक जीव को दर्शाती है एवं 'मकार' मात्रा, मायापति ईश्वर तथा प्राग् नामक जीव की परिचायिका है। स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर तथा जाग्रत्, स्वप्न एवं सुषुप्ति अवस्था के साथ ही साथ 'ओंकार' शब्द ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश का भी सूत्रधार है। वैदिक वाङ्मय में प्राप्त ओंकार को बौद्ध, जैन साहित्य अपना महामन्त्र ही मानता है। इस प्रकार १ओंकार के चार अक्षर, सतिनाम करता-पुरखु इत्यादि सात विशेषणों वाले इस मन्त्र के श्रीगणेश हैं। जिनमें गुरु प्रसादि तक गिनने पर ३८ अक्षर हैं, जिनसे ज्ञात होता है ये अड़तीस पौड़ियाँ अकाल-पुरुष के स+लोक = सलोक उस लोक तक पहुँचने में जीव की सहायता करती हैं।

सद्गुरु का वाचक ओंकार है, यह सच है। भगवद्गीता ८/१३ में कहा भी है—"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म"। १. करता, २. पुरुखु, ३. निरभउ, ४. निरवैरु, ५. अकाल-मूरति, ६. अजूनी, ७. सैभं—ये ईश्वर के सात विशेषण हैं, जो जगत् के उत्पन्न करने में कर्ता (निमित्तकारण), पुरुष (उपादान कारण), कालातीत, निरभउ (निर्+भव) अर्थात् भयरहित या भव (संसार) के कारणों से रहित, निरवैर (वैरभाव से शून्य), अकाल मूरति (कालरहित), अजूनी अजन्मा, (जन्म-मरण-रहित), सैभं (स्वयंभू) स्वयं आविर्भाव होने वाला। इन सात विशेषणों से यह संकेत मिलता है कि विश्व के सप्तद्वीप, सात लोक, सप्तर्षि, शरीर में स्थित सात धातु, संगीत के सप्तक, सात विभक्तियाँ, योग के (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहतनाद, विशुद्धिचक्र, आज्ञाचक्र और सहस्रार) सात चक्रों वाली समस्त सृष्टि की सत्ता इन सात विशेषणों वाले ईश्वर के अधीन (आधीन) है। ईशावास्योपनिषद् में कहा भी है, "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चित् जगत्यां जगत्।"

गुरु नानकदेव जी की यहाँ स्पष्ट घोषणा है कि गुरु के अनुग्रह से प्रभु की प्राप्ति सम्भव है। इस कथन की पुष्टि श्रीमद्भागवत (१०।८०।८३) में इस प्रकार की गयी है— "गुरोरनुग्रहेणैव पुमान् पूर्णः प्रशान्तये" अर्थात् गुरुदेव की कृपा से ही मनुष्य शान्ति का अधिकारी बनता है तथा पूर्णता को प्राप्त करता है।

सौरभ–

जपुजी साहिब के आरम्भ में भगण गण है जो सब प्रकार से यश देने वाला माना गया है। छन्दशास्त्र में आदि गुरु और दो लघु से भगण बनता है,

यथा— ओं सति में (ऽ।।) है। वस्तुतः इस मन्त्र से सम्पूर्ण श्री गुरुग्रन्थ साहिब ही सर्वमान्य हो गया है। भक्तिरस से ओतप्रोत 'सतिनाम करता पुरखु' आदि मन्त्र में एक ही ईश्वर को सात विशेषणों से निर्दिष्ट किया गया है, जिसे ज्ञाताओं के भेद या विषय भेद से जाना गया है। काव्य की दृष्टि से यहाँ उल्लेखालंकार है, क्योंकि भारतीय दर्शनों का दृष्टिकोण ईश्वर के सम्बन्ध में एक नहीं है। साहित्य-दर्पण में आचार्य विश्वनाथ ने उल्लेखालंकार का लक्षण करते हुए कहा है—

क्वचिद् भेदाद् ग्रहीतॄणां विषयाणां तथा क्वचित् ।
एकस्यानेकधोल्लेखो यः स उल्लेख उच्यते ।।

।। ਜਪੁ ।।

ਆਦਿ ਸਚੁ ਜੁਗਾਦਿ ਸਚੁ ।।
ਹੈ ਭੀ ਸਚੁ ਨਾਨਕ ਹੋਸੀ ਭੀ ਸਚੁ ।।੧।।

।। जपु ।।

आदि सचु जुगादि सचु ।।
है भी सचु नानक होसी भी सचु ।।१।।

संगति–

जप के कितने प्रकार हैं और जप किसका करें?

शब्दार्थ–

ਆਦਿ (आदि) = आरम्भ से। ਸਚ (सच) = सत्य है। ਜੁਗਾਦਿ (जुगादि) = युग के प्रारम्भ से। ਹੋਸੀ (होसी) = होगा भी सच।

भावार्थ–

मंगलाचरण के मन्त्र में सात विशेषणों वाले परमात्मा की प्राप्ति में गुरु की कृपा को ही मूल कारण माना गया है, उसी का जप करने का आदेश गुरु नानकदेव जी देते हैं, क्योंकि वह अकाल-पुरुष गुरु, सृष्टि की उत्पत्ति से पहले भी सत्य स्वरूप थे, सतयुग-त्रेता-द्वापर-कलियुग के आदि में सत्य रहे हैं, भूतकाल में सत्य थे, वर्त्तमानकाल में सत्य हैं एवं भविष्यकाल में भी सदा सत्य ही रहेंगे।

'सोऽहं'-'सोऽहं'—अर्थात् मैं वही (परमात्मा) हूँ ऐसा हंसरूपी जीव को पुकारने (जप करने) को कहा गया है। जप के तीन प्रकार हैं—१. वाचक, २. उपासू, ३. मानस। जप करने वाला जब ऊँचे स्वर से बोलकर मन्त्र को जपता है तो उसे 'वाचक' जप कहा जाता है। जापक जब केवल होठों को चलाता हुआ धीरे-धीरे जप करता है तो उस जप को 'उपासू' जप कहा गया है। तीसरा प्रकार, जिसमें होठ भी नहीं हिलते, केवल जिह्वा द्वारा मन से जप किया जाता है उसे मानस जप कहा गया है। वाचक जप से उपासू और उपासू से मानस जप को श्रेष्ठ माना गया है। जापक को जप करते समय विशेष रूप से छः बातों पर ध्यान देना चाहिये—१. शरीर शुद्धि, २. वाणी पर नियन्त्रण, ३. मन्त्र का अर्थबोध, ४. सतर्कता (एकाग्रता), ५. मनःसन्तोष, ६. मन्त्र के प्रति निष्ठा। इन बातों पर विशेष ध्यान देने से साधक को बहुत जल्दी सिद्धि मिलती है और उसके 'सोऽहं' 'सोऽहं' जप से 'स' (संज्ञा) और 'ह' (से अहंकार) हट जाते हैं और उसके मानस पर केवल 'ओऽम्' (ब्रह्म) रह जाता है, जो जीव को परब्रह्म में लीन और विलीन कर देता है। जीव को स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाने के लिए संस्कृत वाङ्मय में तीन प्रस्थान (सोपान, पौड़ी) दर्शाये गये हैं—१. उपनिषद्, इसके जानने से जीव का अज्ञान दूर होता है, ३. ब्रह्मसूत्र जानने से जीव का संशय नष्ट होता है और ३. श्रीमद्भगवद्गीता के चिन्तन से जीव और ब्रह्म में ऐक्य स्थापित होते ही—'ब्रह्म सत्यं, जगन्मिथ्या', 'जीवो ब्रह्मैव नापरः', 'प्रज्ञानं ब्रह्म', 'अहं ब्रह्मास्मि', 'अयमात्मा ब्रह्म' आदि महावाक्य चरितार्थ हो जाते हैं।

यहाँ 'आदि सचु जुगादि सचु' उक्ति सुभाषित है। यहाँ अनुप्रास अलंकार है सचु-सचु की आवृत्ति के कारण, अनुप्रास का लक्षण है— 'अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्' (साहित्यदर्पण)।

ਪਹਲੀ ਪਉੜੀ

ਸੋਚੈ ਸੋਚਿ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਸੋਚੀ ਲਖ ਵਾਰ ।।
ਚੁਪੈ ਚੁਪ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਲਾਇ ਰਹਾ ਲਿਵ ਤਾਰ ।।
ਭੁਖਿਆ ਭੁਖ ਨ ਉਤਰੀ ਜੇ ਬੰਨਾ ਪੁਰੀਆ ਭਾਰ ।।
ਸਹਸ ਸਿਆਣਪਾ ਲਖ ਹੋਹਿ ਤ ਇਕ ਨ ਚਲੈ ਨਾਲਿ ।।

ਕਿਵ ਸਚਿਆਰਾ ਹੋਈਐ ਕਿਵ ਕੂੜੈ ਤੁਟੈ ਪਾਲਿ ।।
ਹੁਕਮਿ ਰਜਾਈ ਚਲਣਾ ਨਾਨਕ ਲਿਖਿਆ ਨਾਲਿ।।੧।।

पहली पउड़ी

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार ।।
चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार ।।
भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार ।।
सहस सिआणपा लख होहि त इकं न चलै नालि।।
किव सचिआरा होईऐ किव कूंड़ै तुटै पालि ।।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ।।१।।

संगति–

आन्तरिक शान्ति का उत्तम साधन क्या है?

शब्दार्थ–

ਸੋਚੈ (सोचै) = शरीर की बाहरी शुद्धि से। ਸੋਚਿ (सोचि) = आन्तरिक पवित्रता नहीं मिलती। ਲਖ (लख) = लाख बार। ਚੁਪੈ (चुपै) = मौन। ਲਿਵਤਾਰ (लिवतार) = निरन्तर। ਬੰਨਾ (बंना) = बन के। ਪੁਰੀਆ (पुरीआ) = नगरियाँ। ਸਹਸ (सहस) = हजार। ਸਿਆਣਪਾ (सिआंणया) = समझदारी। ਕਿਵ (किव) = किस तरह। ਕੂੜੈ (कूड़े) = झूठ। ਤੁਟੈ (तुटे) = टूटे, हटे। ਪਾਲਿ (पालि) = पर्दा। ਰਜਾਈ (रजाई) = आज्ञा। ਨਾਲਿ (नालि) = साथ।

भावार्थ–

इस पौड़ी में सिद्धों (नाथों) के चार प्रश्नों का उत्तर गुरु नानकदेव जी ने दिया है कि शरीर की बाहरी शुद्धि, मौन, उपवास (व्रत) और कृत्रिम चतुराई से आत्मबोध सम्भव नहीं, क्योंकि सच्चे पातशाह को पाने के लिए सच्चा, सुच्चा होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। बाह्य शरीर की शुद्धि कोई लाख बार करे उसे उससे आन्तरिक पवित्रता नहीं हो सकती, क्योंकि भीतरी शुद्धि के लिये राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि को समाप्त करना पड़ता है। इसी प्रकार वाणी के मौनमात्र से मन नियन्त्रित नहीं होता उसके लिए तो चित्त का निरोध ज़रूरी है। त्रैलोक्य

की खाद्य सामग्री पाने से भी तृष्णालुओं की भूख शान्त नहीं होती, क्योंकि आध्यात्मिक भूख की शान्ति तो सन्तोष से सम्भव है। सांसारिक असंख्य चतुराइयाँ भी आत्मचिन्तन में सहायक नहीं हो सकतीं। प्रश्न उठता है कि उपर्युक्त बाहरी मौन, भूख, चतुराई से जब ज्ञानरूपी पर्दा नहीं हट सकता तो जीव का कल्याण कैसे सम्भव है? गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि अकालपुरुष सद्‌गुरु महाराज के आज्ञापालन तथा उनके प्रति अगाध निष्ठा से ही जीव, अज्ञान से छुटकारा पा सकता है क्योंकि भाग्य तो जीव के साथ-साथ चलता है।

भक्त-शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी ने भगवान् रामचन्द्र जी के मुख से कहलाया है—'मोहि कपट छल छिद्र न भावा'। वैदिक वाङ्मय में अनुशासन, एकता के समन्वय के लिए सत्य और श्रद्धा के लिए प्रभु से प्रार्थना की गयी है—'सत्यं च मे श्रद्धा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।' (यजु. १८/५) ऋग्वेद में भी सत्य की महिमा के विषय में कहा गया है—'ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीर। ऋतस्य धीति जिनानि हन्ति'। (ऋग्वेद ४/२३/८) अर्थात् सत्य अनेक भावनाओं का स्रोत है और सत्य, पापों की भावनाओं का नाश करता है। अतः यहाँ गुरु नानकदेव जी ने सच्चे पातशाह को पाने के लिए सत्यवादी बनने पर बल दिया है और शिवसंकल्प के साथ ईश्वर के आदेशों और निर्देशों को मानने की सलाह दी है।

सुभाषित–

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।

ਦੂਸਰੀ ਪਉੜੀ

ਹੁਕਮੀ ਹੋਵਨਿ ਆਕਾਰ ਹੁਕਮੁ ਨ ਕਹਿਆ ਜਾਈ ।।
ਹੁਕਮੀ ਹੋਵਨਿ ਜੀਅ ਹੁਕਮਿ ਮਿਲੈ ਵਡਿਆਈ ।।
ਹੁਕਮੀ ਉਤਮੁ ਨੀਚੁ ਹੁਕਮਿ ਲਿਖਿ ਦੁਖ ਸੁਖ ਪਾਈਅਹਿ ।।
ਇਕਨਾ ਹੁਕਮੀ ਬਖਸੀਸ ਇਕਿ ਹੁਕਮੀ ਸਦਾ ਭਵਾਈਅਹਿ ।।
ਹੁਕਮੈ ਅੰਦਰਿ ਸਭੁ ਕੋ ਬਾਹਰਿ ਹੁਕਮ ਨ ਕੋਇ ।।
ਨਾਨਕ ਹੁਕਮੈ ਜੇ ਬੁਝੈ ਤ ਹਉਮੈ ਕਹੈ ਨ ਕੋਇ ।।੨।।

दूसरी पाउड़ी

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ।।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ।।
हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ।।
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि ।।
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ।।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ।।२।।

संगति–

परब्रह्म के आदेश पालन से अहंकार का नाश कैसे होता है?

शब्दार्थ–

ਆਕਾਰ (आकार) = शकल। ਜੀਅ (जीअ) = जीव। ਵਡਿਆਈ (वडिआई) = सत्कार। ਬਖਸੀਸ (बखसीस) = वरदान। ਭਵਾਈਅਹਿ (भवाईअहि) = आवागमन। ਬੁਝੈ (बुझे) = जानना। ਹਉਮੈ (हउमै) = अहंकार।

भावार्थ–

सिद्धों द्वारा आज्ञा (हुकम) के स्वरूप और प्रभाव के बारे में जिज्ञासा करने पर गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि प्रभु के आदेश का सम्पूर्ण चित्रण तो सम्भव नहीं, परन्तु इतना सत्य है कि दृष्टिगोचर होनेवाले सभी स्थूल शरीर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देव इसी आदेश से उत्पन्न होते हैं। सृष्टि उत्पत्ति, जीव में बड़प्पन, छोटापन, श्रेष्ठता, अधःपतन, सुख-दुःख सब कुछ प्रभु की आज्ञा के ही अधीन हैं। उत्तम आचरण से मुक्ति और निकृष्टाचरण से चौरासी लाख योनियों का भ्रमण भी ईश्वरीय निर्देशन से होता है। आज्ञा के बाहर कुछ भी नहीं है। आज्ञापालक सेवक के मन में अहंकार कभी उत्पन्न नहीं होता अर्थात् वह कभी भी मेरा, तू, तेरा की भावना से दूसरों के अधिकार में हस्तक्षेप नहीं करता। गुरु नानकदेव की दृष्टि में यह 'अहंकार' ही सभी अनर्थों की जड़ है और सृष्टि उत्पत्ति का मूल कारण है। श्रीमद्भगवद्गीता (३/२७) में कहा गया है कि अहंकारी व्यक्ति अपने को विश्व के सभी संचालित होनेवाले कार्यों का कर्ता मान बैठता है—

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ।। (गीता ३/२७)

यहाँ गुरु नानकदेव जी कहते हैं, जो प्रभु के आदेश को सर्वोपरि मानकर चलेगा उसे सभी बुराइयों का मूल अहंकार कभी नहीं हो सकता। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अहंकार को गले का एक रोग बताया है। जिसके कारण रोगी ऊपर ताकता है नीचे देखने की उसकी क्षमता समाप्त हो जाती है—'अहंकार अति दुःखद डमरुआ। दम्भ कपट मदमान नेहरुआ।।' अहंकारी की स्थिति उस टिट्टिभ की तरह होती है जो सोते समय पैर ऊपर करके सोता है कि अगर ऊपर से आकाश गिर पड़े तो उसे इन पैरों के बल से रोका जा सके। अहंकारी भी सात्त्विक, राजस, तामस भेद से तीन प्रकार के होते हैं। रामचरितमानस में परशुराम जी सात्त्विक अहंकारी हैं, बाली राजस अहंकारी है और रावण तामस प्रवृत्ति-प्रकृति का अहंकारी है जो किसी की भी नहीं सुनता।

सुभाषित–

"हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै न कोइ।।"

ਤੀਸਰੀ ਪਉੜੀ

ਗਾਵੈ ਕੋ ਤਾਣੁ ਹੋਵੈ ਕਿਸੈ ਤਾਣੁ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਦਾਤਿ ਜਾਣੈ ਨੀਸਾਣੁ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਗੁਣ ਵਡਿਆਈਆ ਚਾਰ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਵਿਦਿਆ ਵਿਖਮੁ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਸਾਜਿ ਕਰੇ ਤਨੁ ਖੇਹ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਜੀਅ ਲੈ ਫਿਰਿ ਦੇਹ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਜਾਪੈ ਦਿਸੈ ਦੂਰਿ ।।
ਗਾਵੈ ਕੋ ਵੇਖੈ ਹਾਦਰਾ ਹਦੂਰਿ ।।
ਕਥਨਾ ਕਥੀ ਨ ਆਵੈ ਤੋਟਿ ।।
ਕਥਿ ਕਥਿ ਕਥੀ ਕੋਟੀ ਕੋਟਿ ਕੋਟਿ ।।

ਦੇਦਾ ਦੇ ਲੈਦੇ ਥਕਿ ਪਾਹਿ ।।
ਜੁਗਾ ਜੁਗੰਤਰਿ ਖਾਹੀ ਖਾਹਿ ।।
ਹੁਕਮੀ ਹੁਕਮੁ ਚਲਾਏ ਰਾਹੁ ।।
ਨਾਨਕ ਵਿਗਸੈ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ।।੩।।

तीसरी पउड़ी

गावै को ताणु होवै किसै ताणु ।।
गावै को दाति जाणै नीसाणु ।।
गावै को गुण वडिआईआ चार ।।
गावै को विदिआ विखमु वीचारु ।।
गावै को साजि करे तनु खेह ।।
गावै को जीअ लै फिरि देह ।।
गावै को जापै दिसै दूरि ।।
गावै को वेखै हादरा हदूरि ।।
कथना कथी न आवै तोटि ।।
कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि ।।
देदा दे लैदे थकि पाहि ।।
जुगा जुगंतरि खाही खाहि ।।
हुकमी हुकमु चलाए राहु ।।
नानक विगसै वेपरवाहु ।।३।।

संगति–

परमात्मा को बेपरवाह (तटस्थ) क्यों कहा गया है?

शब्दार्थ–

ਗਾਵੈ (गावै) = गाना। ਕੋ (को) = कौन। ਤਾਣੁ (ताणु) = बल। ਦਾਤਿ (दाति) = दाता। ਨੀਸਾਣੁ (नीसाणु) = चिह्न। ਵਡਿਆਈਆਂ (वडिआईआ) = महिमा। ਵਿਖਮੁ (विषमु) = कठिन। ਦਿਸੈ (दिसै) = देखना। ਹਾਦਰਾ ਹਦੂਰੀ (हादरा हदूरी) = प्रत्यक्ष। ਤੋਟਿ (तोटि) = अन्त। ਲੈਦੇ (लैदे) = लेनेवाले। ਵਿਗਸੈ (विगसै) = प्रसन्न। ਵੇਪਰਵਾਹ (वेपरवाह) = तटस्थ।

भावार्थ–

हुकम (आज्ञा) चलाने वाले अकाल-पुरुष के पौरुष (बल) के सम्बन्ध में जिज्ञासा करने पर सिद्धों को गुरु नानकदेव जी बताते हैं कि प्रभु के आदेश की तरह उनके समग्र बल का कथन तो सम्भव नहीं, क्योंकि जीव सबल नहीं, सबल तो ईश्वर ही है। ईश्वर ऐसा ही है, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। अतुलनीय, अद्वितीय परमात्मा के विषय में लोगों ने अपने-अपने मतानुसार कुछ कहा है जो पूर्ण नहीं है, क्योंकि वेद भी उसे 'नेति नेति' कहकर चुप हो जाते हैं। पौराणिक लोक उस ईश्वर को मधुकैटभ सदृश बलवान् दैत्यों को मारने वाला, नारद आदि ऋषि उसे दिव्य नेत्रादि प्रदान करने वाला, सांख्यशास्त्र के प्रणेता कपिल मुनि २४ तत्त्वों से निर्मित जगत्, पूर्व-मीमांसक लोग कर्मकाण्ड द्वारा सुलभ योगी, तथा उत्तर-मीमांसा वाले जिसे आत्मसाक्षात्कार का विषय मानते हैं। उनके सम्बन्ध में उसको बस अकथनीय ही कहा जा सकता है।

जो परमात्मा पंचभूत (क्षिति-जल-पावक-गगन-समीर) से शरीर निर्मित करता है और पुनः उसे नष्ट करता है, जो प्रभु जीव को शरीर में डालता है और अन्त में उसे निकाल भी लेता है, जो जानने और देखने से दूर है, जिसका बल अकथनीय है, कहने वाले बड़े-बड़े आचार्य, सिद्ध-सन्त भी जिसका अन्त नहीं ढूँढ सके, जो निरन्तर युग-युगों से जीव मात्र को दे रहा है, जिससे माँगने वाले निरन्तर खा और पी रहे हैं, उसकी आज्ञा ही सर्वोपरि है। वह स्वयं तो तटस्थ, इच्छारहित और हर स्थिति में सदा प्रसन्नहृदय है। गुरु नानकदेव जी ने इस पौड़ी में भगवान् को बेपरवाह (तटस्थ) कहा है। मंगलाचरण में ही अकाल पुरुख (पुरुष) को पुरुष कहा है, जिसका अर्थ है—'पुरि शेते' अर्थात् जो इस देह-अन्तःकरण में सोता है। प्रत्यगात्मा से भिन्न (तटस्थ) यह परमात्मा है। बृहदारण्यक उपनिषद् (तृतीय अध्याय, अष्टम ब्राह्मण) में महर्षि याज्ञवल्क्य और गार्गी का संवाद है जिसमें महर्षि ने कहा है—परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है, त्रिकालसत्य है, वह न भोक्ता है और न हीं भोज्य है। कठोपनिषद् में भी—'पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परागतिः' (१/३) अर्थात् ब्रह्म से परे कुछ नहीं, वह परागति है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में 'सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरो मुखम्। सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति' (तृ. अध्याय १६ मन्त्र) अर्थात् उसके हाथ, पैर, आखें, सिर, मुख, कान सर्वत्र हैं और वह सम्पूर्ण विश्व को अपने में समेटे हुए स्थित है। यह सत्य है कि परमात्मा की इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता।

सुभाषित–

देदा दे लैदे थकि पाहि।
जुगा जुगंतरि खाही खाहि।।

ਚਉਥੀ ਪਉੜੀ

ਸਾਚਾ ਸਾਹਿਬੁ ਸਾਚੁ ਨਾਇ ਭਾਖਿਆ ਭਾਉ ਅਪਾਰੁ ।।
ਆਖਹਿ ਮੰਗਹਿ ਦੇਹਿ ਦੇਹਿ ਦਾਤਿ ਕਰੇ ਦਾਤਾਰੁ ।।
ਫੇਰਿ ਕਿ ਅਗੈ ਰਖੀਐ ਜਿਤੁ ਦਿਸੈ ਦਰਬਾਰੁ ।।
ਮੁਹੌ ਕਿ ਬੋਲਣੁ ਬੋਲੀਐ ਜਿਤੁ ਸੁਣਿ ਧਰੇ ਪਿਆਰੁ ।।
ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਵੇਲਾ ਸਚੁ ਨਾਉ ਵਡਿਆਈ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਕਰਮੀ ਆਵੈ ਕਪੜਾ ਨਦਰੀ ਮੋਖੁ ਦੁਆਰੁ ।।
ਨਾਨਕ ਏਵੈ ਜਾਣੀਐ ਸਭੁ ਆਪੇ ਸਚਿਆਰੁ ।।੪।।

चौथी पउड़ी

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु ।।
आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ।।
फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ।।
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु ।।
अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ।।
करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ।।
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ।।४।।

संगति–

ईश्वर की कृपा (नदरी) और उसके नाम को द्वार क्यों कहा है?

शब्दार्थ–

ਨਾਇ (नाइ) = नाम। ਭਾਖਿਆ (भाखिआ) = कहा है। ਭਾਉ (भाउ) = भाव। ਆਖਹਿ (आखहि) = कह कह कर। ਜਿਤੁ (जितु) = जिससे। ਮੁਹੌ (मुहो) = मुख

से। ਵੇਲਾ (वेला) = समय। ਕਪੜਾ (कपड़ा) = वस्त्र, शरीर। ਨਦਰੀ (नदरी) = दया। ਭੋਖੁ (भोखु) = मोक्ष। ਦੁਆਰ (दुआर) = दरवाजा।

भावार्थ–

सिद्धों ने गुरु नानकदेव जी से पूछा कि आपके अकथनीय, अतुलनीय बलशाली परमात्मा का नाम क्या है? गुरु नानकदेव जी ने उत्तर दिया कि सच्चे प्रभु की बड़ाई और नाम भी सच्चा है। जिसने भी इस नाम को पुकारा है उसे असीम ज्ञान और प्रेम मिला है। जिसने भी जो याचना की है उस दाता ने माँगने वाले को उसके कर्मों के अनुसार देकर उसे निहाल किया है। अब प्रश्न यह उठता है कि दाता की दी हुंई अमूल्य वस्तुओं में कौन-सी वस्तु उन्हें प्रदान की जाय जिससे प्रसन्न होकर हमें वह अपना दर्शन दें या कौन-सी स्तुति करें जिसे सुनकर हमारे पर ये कृपा करें। उत्तर में कहा गया है, प्रातः ब्राह्म मुहूर्त्त में उठकर सतनाम का उच्चांरण करने से प्रभु की कृपा होती है। इस कार्य से प्रसन्न होकर परमात्मा अपना पराभक्तिरूपी वस्त्र साधक को सहर्ष प्रदान करते हैं जिससे मुक्ति का द्वार खुल जाता है। ईश्वर स्थावर, जंगम सम्पूर्ण सृष्टि के स्वामी हैं और सर्वत्र व्यापक हैं। उन्हें जिस नाम से पुकारें वही सही है।

ਪੰਜਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਥਾਪਿਆ ਨ ਜਾਇ ਕੀਤਾ ਨ ਹੋਇ ॥
ਆਪੇ ਆਪਿ ਨਿਰੰਜਨੁ ਸੋਇ ॥
ਜਿਨਿ ਸੇਵਿਆ ਤਿਨਿ ਪਾਇਆ ਮਾਨੁ ॥
ਨਾਨਕ ਗਾਵੀਐ ਗੁਣੀ ਨਿਧਾਨੁ ॥
ਗਾਵੀਐ ਸੁਣੀਐ ਮਨਿ ਰਖੀਐ ਭਾਉ ॥
ਦੁਖੁ ਪਰਹਰਿ ਸੁਖੁ ਘਰਿ ਲੈ ਜਾਇ ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਾਦੰ ਗੁਰਮੁਖਿ ਵੇਦੰ ਗੁਰਮੁਖਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ ॥
ਗੁਰੁ ਈਸਰੁ ਗੁਰੁ ਗੋਰਖੁ ਬਰਮਾ ਗੁਰੁ ਪਾਰਬਤੀ ਮਾਈ ॥
ਜੇ ਹਉ ਜਾਣਾ ਆਖਾ ਨਾਹੀ ਕਹਣਾ ਕਥਨੁ ਨ ਜਾਈ ॥
ਗੁਰਾ ਇਕ ਦੇਹਿ ਬੁਝਾਈ ॥
ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਕਾ ਇਕੁ ਦਾਤਾ ਸੋ ਮੈ. ਵਿਸਰਿ ਨ ਜ਼ਾਈ॥੫॥

पंचवीं पउड़ी

थापिआ न जाइ कीता न होइ ।।
आपे आपि निरंजनु सोइ ।।
जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु ।।
नानक गावीऐ गुणी निधानु ।।
गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ ।।
दुखु परहरि सुखु घरि लै जाई ।।
गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई ।।
गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई ।।
जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई ।।
गुरा इक देहि बुझाई ।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ।।५।।

संगति–

ईश्वर की (मूर्त्ति आदि में) स्थापना क्यों नहीं हो सकती?

शब्दार्थ–

ਥਾਪਿਆ (थापिआ) = स्थापना। ਕੀਤਾ (कीता) = करना। ਨਿਰੰਜਨ (निरंजन) = मायारहित, निराकार। ਜੇ (जे) = अगर। ਹਉ (हउ) = मैं अहंकार।

भावार्थ–

इस पौड़ी में नाथों (सिद्धों) ने कहा है, अकाल-पुरुष नादी (स्थापित) है या बिदी (उत्पन्न) है? इसके उत्तर में गुरु नानकदेव कहते हैं— ईश्वर की न तो स्थापना (मूर्त्ति रूप में) की जा सकती है और न ही उसे बनाया या उत्पन्न किया जा सकता है। क्योंकि, वह परमात्मा तो मायारहित, अनन्त, अजन्मा है। जिन साधकों ने उसकी सेवा-आराधना की है उन्हें सत्कार मिला है। सिद्धों! आप लोग भी उस गुणनिधान परमपिता परमेश्वर का सुयश गायन करें। अपने से छोटों को प्रभु का यश कहिये, बड़ों से श्रवण कीजिये और जब कोई श्रोता न हो तो स्वयं उनका चिन्तन करें क्योंकि वे प्रभु चिन्ताहरण हैं। ऐसे निरंकार की कीर्त्ति गाथा के कथन, श्रवण तथा मनन से दुःखों का नाश और सुखों की प्राप्ति होती है।

यहाँ गुरु के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है कि गुरु की वाणी नाद (अन्तरध्वनि) है, वेद है, क्योंकि परमात्मा, गुरु के मुख में विराजमान हैं। गुरु की कृपा से शंकर, विष्णु, ब्रह्मा, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि हैं अर्थात् ये सब गुरु के ही स्वरूप हैं। गुरु नानकदेव जी कहते हैं, अगर गुरु के गुणों को जान भी लिया जाये तो वे गुण वाणी से वर्णित नहीं किये जा सकते, क्योंकि वाणी वहाँ अवरुद्ध हो जाती है। बस गुरु महाराज ने एक ही बात बताई है कि 'ईश्वर को सब जीवों में वर्णित किया गया है और उसकी सत्ता को किसी भी दशा, दिशा में न भूलने का निर्देश दिया गया है, क्योंकि गूँगे को वक्ता और वक्ता को गूँगा बनाने की सामर्थ्य केवल सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक परमात्मा में ही है, किसी साधारण पुरुष में नहीं। भगवान् आद्य शङ्कराचार्य ने भी अपने स्तोत्र 'निर्वाणषट्कम्' के छठें श्लोक में 'चिदानन्दरूपः शिवोऽहम्, शिवोऽहम्' कहकर निर्विकल्प और निराकार से भी किसी ऊपरी शक्ति का चित्रण किया है।

सुभाषित–

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।

ਛੇਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਾ ਜੇ ਤਿਸੁ ਭਾਵਾ ਵਿਣੁ ਭਾਣੇ ਕਿ ਨਾਇ ਕਰੀ ।।
ਜੇਤੀ ਸਿਰਠਿ ਉਪਾਈ ਵੇਖਾ ਵਿਣੁ ਕਰਮਾ ਕਿ ਮਿਲੈ ਲਈ ।।
ਮਤਿ ਵਿਚਿ ਰਤਨ ਜਵਾਹਰ ਮਾਣਿਕ ਜੇ ਇਕ ਗੁਰ ਕੀ ਸਿਖ ਸੁਣੀ ।।
ਗੁਰਾ ਇਕ ਦੇਹਿ ਬੁਝਾਈ ।।
ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਕਾ ਇਕੁ ਦਾਤਾ ਸੋ ਮੈ ਵਿਸਰਿ ਨ ਜਾਈ ।।੬।।

छेवीं पउड़ी

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी ।।
जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ।।
मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ।।
गुरा इक देहि बुझाई ।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ।।६।।

संगति–

वास्तविक तीर्थ और रत्न, जवाहर क्या हैं?

शब्दार्थ–

ਨਾਵਾ (नावा) = स्नान। ਭਾਵਾ (भावा) = अच्छा लगना। ਨਾਇ (नाइ) = नहीं। ਜੇਤੀ (जेती) = जितनी। ਸਿਰਠੀ (सिरठी) = सृष्टि। ਉਪਾਈ (उपाई) = उत्पन्न।

भावार्थ–

इस पौड़ी में उन सिद्धों के प्रश्न का उत्तर है जो गुरु नानकदेव जी को अपबे नाथ-पन्थ में मिलाने हेतु तीर्थयात्रा तथा सांसारिक मणि, रत्न, जवाहर आदि भूषणों का प्रलोभन देते हैं। वेदी-कुलावतंस श्री गुरु नानकदेव जी कहते हैं, अगर तीर्थयात्रा से अकाल-पुरुष प्रसन्न होते हों तो हमें तीर्थयात्रा और वहाँ स्नान आदिक क्रियाएँ करने में कोई आपत्ति नहीं, किन्तु सत्य तो यह है कि शुभ कर्मों का सम्पादन जहाँ किया जाता है वहीं तीर्थ चले आते हैं। तीर्थ शब्द का अर्थ ही है—'तरति पापादिकं यस्मात् तत् तीर्थम्'। भगवान् शङ्कराचार्य ने भी कहा है—'तीर्थं परं किं स्वमनो विशुद्धम्'। अर्थात् मन की शुद्धि ही परम तीर्थ है। पुराणों में छः प्रकार के तीर्थ कहे गये हैं—१.भक्ततीर्थ (श्रीमद्भागवत १।१३।१०), २. गुरुतीर्थ (पद्मपुराण, भूमि खण्ड ८५।१२-१४), ३. माता एवं ४. पितातीर्थ। (पद्मपुराण, भूमिखण्ड ६३।१४, २१) ५. पतितीर्थ (पद्मपुराण ४१।१२-१४), ६. पत्नीतीर्थ (पद्मपुराण, भूमिखण्ड ५९/११-१५,२४)। सत्य तो यह है गुरु नानकदेव जैसे महापुरुष जहाँ पैर धरते हैं वहाँ तीर्थ बन जाते हैं। कहा भी है 'तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि साधवः।' सन्त तो जङ्गमतीर्थ हैं ही, अतः उन्हें इस बाहरी आडम्बरी तीर्थयात्रा की आवश्यकता नहीं है। गुरु नानकदेव की मान्यता है कि ईश्वर की कृपा और जीव का सुकर्म ही सम्पूर्ण सृष्टि में फलदायक है। गुरुवाणी में विश्वास और आस्था रखने से शुद्ध मति में सच्चे मोती, रत्न, जवाहर रूपी सत्-संतोष-विचार अनायास ही उपलब्ध होते हैं। गुरु महाराज ने एक बात बताई है कि सभी प्राणियों का दाता एक है उसे सदा स्मरण रखिये। प्रभु का स्मरण न करनेवाले को आत्मघाती कहा है—'नाम न जपहिं ते आत्मघाती।' इसी कथन की पुष्टि श्रीमद्भागवत (११।२०।१७) में की गयी है।

सुभाषित–

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी।

ਸਤਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਜੇ ਜੁਗ ਚਾਰੇ ਆਰਜਾ ਹੋਰ ਦਸੂਣੀ ਹੋਇ ।।
ਨਵਾ ਖੰਡਾ ਵਿਚਿ ਜਾਣੀਐ ਨਾਲਿ ਚਲੈ ਸਭੁ ਕੋਇ ।।
ਚੰਗਾ ਨਾਉ ਰਖਾਇ ਕੈ ਜਸੁ ਕੀਰਤਿ ਜਗਿ ਲੇਇ ।।
ਜੇ ਤਿਸੁ ਨਦਰਿ ਨ ਆਵਈ ਤ ਵਾਤ ਨ ਪੁਛੈ ਕੇ ।।
ਕੀਟਾ ਅੰਦਰਿ ਕੀਟੁ ਕਰਿ ਦੋਸੀ ਦੋਸੁ ਧਰੇ ।।
ਨਾਨਕ ਨਿਰਗੁਣਿ ਗੁਣੁ ਕਰੇ ਗੁਣਵੰਤਿਆ ਗੁਣੁ ਦੇ।।
ਤੇਹਾ ਕੋਇ ਨ ਸੁਝਈ ਜਿ ਤਿਸੁ ਗੁਣੁ ਕੋਇ ਕਰੇ ।।੭।।

सातवीं पउड़ी

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ।।
नवा खंडा विचि जाणीए नालि चलै सभु कोइ ।।
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ।।
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ।।
कीटा अंदरि कीटु करिं दोसी दोसु धरे ।।
नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।।
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे ।।७।।

संगति–

भगवान् की कृपा और स्मरण को इतना महत्त्व क्यों दिया गया है?

शब्दार्थ–

ਆਰਜਾ (आरजा) = आयु। ਹੋਰ (होर) = और। ਦਸੂਣੀ (दसूणी) = दसगुणा। ਚੰਗਾ (चंगा) = अच्छा। ਕੀਟਾ (कीटा) = कीड़ा। ਤੇਹਾ (तेहा) = वैसा।

भावार्थ–

सिद्धों द्वारा गुरु नानकदेव को यौगिक क्रियाओं द्वारा दीर्घायु का जब लालच दिखाया गया तो गुरु नानकदेव जी कहते हैं—ईश्वर के अनुग्रह बिना युग (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग) की पूरी आयु ही नहीं अगर इन युगों से दसगुणी भी आयु मिल जाये, या नौ खण्डों (किंपुरुष, भदर, केतमाल, हरिश्वरष, हिरण्य,

रमय, कुरुखेत, इलाव्रत,भारत) में प्रसिद्ध हो जाये, अथवा वहाँ के सभी लोग सहर्ष साथ चलने में तत्पर हों, सर्वत्र नाम हो और विश्व भर में यश पताका फहराने लगे तो भी सब व्यर्थ है। क्योंकि ईश्वर की कृपा से रहित व्यक्ति, कीटों में भी निम्न कोटि का माना जायगा और अपराधी भी। यह अकाल-पुरुष ही हैं जो गुणहीनों को गुणवान् और गुणवानों को और अधिक गुणवाला बनाते हैं। ईश्वर को देने वाला कोई दृष्टिगोचर नहीं होता, अपितु ईश्वर की कृपादृष्टि से बने गुणवान्, धनवान्, बुद्धिमान्, विद्वानों का झुण्ड सर्वत्र दिखाई देता है।

सुभाषित–

नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।



बोधः

(ज्ञान)

ਅੱਠਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸੁਣਿਐ ਸਿਧ ਪੀਰ ਸੁਰਿ ਨਾਥ ।।
ਸੁਣਿਐ ਧਰਤਿ ਧਵਲ ਆਕਾਸ ।।
ਸੁਣਿਐ ਦੀਪ ਲੋਅ ਪਾਤਾਲ ।।
ਸੁਣਿਐ ਪੋਹਿ ਨ ਸਕੈ ਕਾਲੁ ।।
ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਸਦਾ ਵਿਗਾਸੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਦੂਖ ਪਾਪ ਕਾ ਨਾਸੁ ।।੮।।

आठवीं पउड़ी

सुणिऐ सिध पीर सुरि नाथ ।।
सुणिऐ धरति धवल आकास ।।
सुणिऐ दीप लोअ पाताल ।।
सुणिऐ पोहि न सकै कालु ।।
नानक भगता सदा विगासु ।।
सुणिऐ दूख पाप का नासु ।।८।।

संगति–

भगवत्प्राप्ति में 'श्रवण' को इतना महत्त्व क्यों दिया गया है?

शब्दार्थ–

ਸੁਰਿ (सुरि) = देवता। ਧਵਲ (धवल) = धर्म, सफेद। ਦੀਪ (दीप) = द्वीप। ਲੋਅ (लोक) = लोक। ਪੋਹਿ (पोहि) = पास। ਭਗਤਾ (भगता) = भक्त। ਵਿਗਾਸ (विगास) = प्रसन्नता।

भावार्थ–

१. ओंकार, जप, सत्य, प्रभु आदेश आदि अध्ययन के बाद यहाँ से बोध (ज्ञान) का विषय आरम्भ होता है, जिसमें सर्वप्रथम 'श्रवण' का प्रतिपादन किया गया है। गुरु नानकदेव जी की मान्यता है कि वाहिगुरु (परमात्मा) का नाम सुन-सुनकर जीव सिद्ध, पीर, देवता और नाथ (गोरखनाथ) बने हैं। यह नाम-श्रवण का ही सुफल है कि भूमि निर्मल, आकाश स्थिर है और जम्बु, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर ये सात द्वीप; भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यं ये सात भुवन; अतल, वितल, सुतल, धरातल, रसातल, महातल, पाताल ये सात पाताल अपनी जगह पर विराजमान हैं। प्रभु का सच्चे मन से स्मरण करने से जीव कालजयी बन जाता है, अर्थात् उसके पास मृत्यु नहीं फटकती। गुरु नानकदेव जी कहते हैं, भगवान् का भक्त अपनी श्रवणनिष्ठा के साथ सदा आनन्द सागर में सराबोर रहता है और इसी श्रवण के कारण उसके दुःखों और दुःखों के कारण महाभूतों का नाश होता है। श्रवण के इसी महत्त्व को ध्यान में रखते हुए वेदव्यास जी ने श्रीमद्भागवत् (७/५/२३) में नवधा-भक्ति में 'श्रवणं कीर्तनम्' कहकर श्रवण-भक्ति को प्राथमिकता दी है।

सुभाषित–

नानक भगता सदा विगासु।
सुणिऐ दूख पाप का नासु।।

ਨੌਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸੁਣਿਐ ਈਸਰੁ ਬਰਮਾ ਇੰਦੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਮੁਖਿ ਸਾਲਾਹਣ ਮੰਦੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਤਨਿ ਭੇਦ ।।
ਸੁਣਿਐ ਸਾਸਤ ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ ਵੇਦ ।।
ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਸਦਾ ਵਿਗਾਸੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਦੂਖ ਪਾਪ ਕਾ ਨਾਸੁ ।।੯।।

नौवीं पउड़ी

सुणिऐ ईसरु बरमा इंदु ॥
सुणिऐ मुखि सालाहण मंदु ॥
सुणिऐ जोग जुगति तनि भेद ॥
सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद ॥
नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥९॥

संगति–

प्रभु के नाम-श्रवण से जीव अजर-अमर कैसे होता है?

शब्दार्थ–

ਈਸਰੁ (ईसरु) = ईश्वर। ਬਰਮਾ (बरमा) = ब्रह्मा। ਇੰਦੁ (इंदु) = इन्द्र। ਮੰਦੁ (मंदु) =नीच। ਜੋਗ (जोग) = योग। ਜੁਗਤਿ (जुगति) = युक्ति। ਤਨਿ (तनि) = तीन। ਸਾਸਤ (सासत) = शास्त्र। ਸਿਮ੍ਰਿਤਿ (सिम्रिति) = स्मृति)।

भावार्थ–

वाहिगुरु परमात्मा का गुणगान सुनने से जीव ईश्वर, ब्रह्मा और इन्द्र की पदवी प्राप्त करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इन्द्रादि पद पाने के पीछे श्रवण शक्ति ही कारण है। प्रभु का नाम श्रवण करने से मन्द (नीच) व्यक्ति भी समाज में सत्कारयोग्य हो जाता है। महर्षि वाल्मीकि, अजामिल आदि अनेक उदाहरण हैं जिन्होंने अन्त में प्रभु का नाम श्रवण किया और श्रेष्ठ हो गये। श्रवण के बल से जीव ब्रह्मयोग के यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि— इन आठ सोपानों को सरलता से समझ लेता है। नाम श्रवण करने वाला छः शास्त्रों— व्याकरण, न्याय, ज्योतिष, सांख्य, मीमांसा, निरुक्त, विभिन्न स्मृतियों— मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति आदि तथा चार वेदों— ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद को सुगमता और सहज भाव से जान जाता है। गुरु नानकदेव जी की मान्यता है कि ईश्वर का गुणगान सुनने वाला सदा प्रसन्न रहता है और उसके दुःखों, क्लेशों के कारणभूत पापों का स्वयं ही अन्त हो जाता है। प्रश्नोपनिषद् (६/८) में एक धर्मविज्ञानी, श्रवण-प्रेमी कहता है—'त्वं हि नः पिता, योऽस्माकमविद्यायाः परं पारं तारयसि।'

सुभाषित–

सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद।

ਦਸਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸੁਣਿਐ ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਗਿਆਨੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਅਠਸਠਿ ਕਾ ਇਸਨਾਨੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਪੜਿ ਪੜਿ ਪਾਵਹਿ ਮਾਨੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਲਾਗੈ ਸਹਜਿ ਧਿਆਨੁ ।।
ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਸਦਾ ਵਿਗਾਸੁ ।।
ਸੁਣਿਐ ਦੂਖ ਪਾਪ ਕਾ ਨਾਸੁ ।।੧੦।।

दसवीं पउड़ी

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु ।।
सुणिऐ अठसठि का इसनानु ।।
सुणिऐ पड़ि पड़ि पावहि मानु ।।
सुणिऐ लागै सहजि धिआनु ।।
नानक भगता सदा विगासु ।।
सुणिऐ दूख पाप का नासु ।।१०।।

संगति–

नाम श्रवण से बहिरंग और अन्तरंग साधनों की साधक को प्राप्ति कैसे होती है?

शब्दार्थ–

ਸਤੁ (सतु) = सत्य। ਸੰਤੋਖ (संतोख) = सन्तोष। ਗਿਆਨ (गिआन) = ज्ञान। ਅਠਸਠਿ (अठसठि) = अड़सठ। ਇਸਨਾਨੁ (इसनानु) = स्नान। ਸਹਜਿ (सहजि) = स्वाभाविक। ਧਿਆਨੁ (धिआनु) = ध्यान।

भावार्थ–

परमपिता परमात्मा की कीर्त्ति, कृति का प्रीतिपूर्वक श्रवण ही जीव को उसके जीवन में सत्य, सन्तोष और आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि कराता है। नाम श्रवण में अद्भुत शक्ति है जो घर बैठे जीव को भारत-वर्ष के प्रसिद्ध ६८ तीर्थों के स्नान का फल प्रदान करता है। ये ६८ तीर्थ सम्भवत: उस समय के ५२ शक्ति पीठ, १२ ज्योतिर्लिङ्ग तथा ४ शृङ्गेरी, बद्रीनाथ, पुरी और द्वारिका के मठ रहे होंगे। नाम श्रवण से मानव, समाज में सत्कार दृष्टि से देखा जाता है। भगवान् के सेवक सदा हर्षित रहते हैं और उनके पाप-पुंज श्रवण मात्र से ही स्वाहा हो जाते हैं।

गुरु नानकदेव जी ने भारत के भौगोलिक क्षेत्र के अध्ययन हेतु ६८ तीर्थों के स्नान की चर्चा की है। इससे उनके तीर्थाटन की यात्राओं का आभास होता है। 'तीर्थ' शब्द 'तॄ'-(प्लवनतंरणयो:) धातु से निष्पन्न होता है, जिसका सीधा अर्थ है—'तीर्यते अनेन तीर्थ:।' 'ती' से तात्पर्य (धर्म-काम-मोक्ष से है और 'र्थ' से अर्थ की ओर संकेत है, क्योंकि विना अर्थ के तीर्थ-यात्रा सम्भव नहीं। यहाँ इस पौड़ी में तो श्रवण मात्र से ही तीर्थाटन और स्नान की बात की गयी है, जिसे निर्धन से निर्धन व्यक्ति भी कर सकता है। श्रीमद्भागवत (१।१३।१०) में 'भागवतास्तीर्थभूता: स्वयम्' कहकर श्रवण करने वाले भागवत भक्तों का महत्त्व बताया है।

सुभाषित–

सुणिऐ अठसठि का इसनान।

ਗਿਆਰਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸੁਣਿਐ ਸਰਾ ਗੁਣਾ ਕੇ ਗਾਹ।।
ਸੁਣਿਐ ਸੇਖ ਪੀਰ ਪਾਤਿਸਾਹ ।।
ਸੁਣਿਐ ਅੰਧੇ ਪਾਵਹਿ ਰਾਹੁ।।
ਸੁਣਿਐ ਹਾਥ ਹੋਵੈ ਅਸਗਾਹੁ ।।
ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਸਦਾ ਵਿਗਾਸੁ।।
ਸੁਣਿਐ ਦੂਖ ਪਾਪ ਕਾ ਨਾਸੁ ।।੧੧।।

ग्यारहवीं पउड़ी

सुणिऐ सरा गुणा के गाह ।।
सुणिऐ सेख पीर पातिसाह ।।
सुणिऐ अंधे पावहि राहु ।।
सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ।।
नानक भगता सदा विगासु ।।
सुणिऐ दूख पाप का नासु ।।११।।

संगति–

नाम श्रवण से परमलोक की प्राप्ति कैसे होती हैं?

शब्दार्थ–

ਸਰਾ (सरा) = सागर। ਗਾਹ (गाह) = अवगाहन, डुबकी। ਅਸਗਾਹੁ (असगाहु) = अथाह, असीम। ਹਾਥ (हाथ) = हाथ। ਹੋਵੈ (होवै) = प्रत्यक्ष होना।

भावार्थ–

भगवान् के नाम-श्रवण में अवगाहन (स्नान या डुबकी) लगाकर साधक स्वयं सद्गुणों का सागर बनता है। यह नाम-श्रवण का ही परिणाम है कि लोग शेख, पीर और बादशाह की पदवी से विभूषित होते हैं। अज्ञानी लोगों को सन्मार्ग दिखाने वाला एकमात्र प्रभु का नाम-श्रवण ही तो है जो साधनागत व्यक्तियों को भगवान् का साक्षात्कार कराता है। यही कारण है कि भगवान् के भक्तों को भव-सागर की अगाध जलराशि भी केवल हाथ भर गहरी दिखाई देती है। श्रवणकर्ताओं की प्रसन्नता और अघहीनता के पीछे इस श्रवण महाराज का ही वरदहस्त है। श्वेताश्वतर-उपनिषद् (२।५) में महर्षि ने सम्बोधित करते हुए स्पष्ट घोषणा की है—"शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः। आ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः।' अर्थात् 'हे अमर पुत्रों! हे दिव्यधाम के निवासियों! सुनो, हमें अन्धकार से आलोक की ओर जाने का मार्ग मिल गया है। अज्ञानान्धकार को पार किये बिना प्रभु का साक्षात्कार असम्भव है। दर्शनशास्त्र के हेतुओं में प्रथम स्थान श्रवण का ही है—'श्रोतव्यः' से स्पष्ट है। बारहवीं पौड़ी में पूरा श्लोक दिया गया है।

सुभाषित–

सुणिऐ अंधे पावहि राहु।

ਬਾਰਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਮੰਨੇ ਕੀ ਗਤਿ ਕਹੀ ਨ ਜਾਇ।।
ਜੇ ਕੋ ਕਹੈ ਪਿਛੈ ਪਛੁਤਾਇ ।।
ਕਾਗਦਿ ਕਲਮ ਨ ਲਿਖਣਹਾਰੁ।।
ਮੰਨੇ ਕਾ ਬਹਿ ਕਰਨਿ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਐਸਾ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਹੋਇ ।।
ਜੇ ਕੋ ਮੰਨਿ ਜਾਣੈ ਮਨਿ ਕੋਇ ।।੧੨।।

बारहवीं पउड़ी

मंने की गति कही न जाइ ।।
जे को कहै पिछै पछुताइ ।।
कागदि कलम न लिखणहारु ।।
मंने का बहि करनि वीचारु ।।
ऐसा नामु निरंजनु होइ ।।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ।।१२।।

संगति–

सद्‌गुरुओं के मन्त्र का मनन करने वाला भवसागर से कैसे पार होता है?

शब्दार्थ–

ਮੰਨੇ (मंने) = मनन करने वाला। ਪਿਛੈ (पिछै) = बाद में। ਬਹਿ (बहि) = बैठकर। ਮੰਨਿ (मंनि) = मनन से उंत्पन्न आनन्द। ਮਨਿ (मनि) = मन में।

भावार्थ–

अकाल-पुरुष सद्‌गुरु महाराज के गुणानुवाद के श्रवण के पश्चात् जो व्यक्ति उस नाम श्रवण पर चिन्तन, मनन करता है वह कितनी ऊँची पदवी प्राप्त करेगा, उसकी इस गति, मति की कोई सीमां नहीं। अगर इस मननशील जीव की इस अबाधगति को कोई पण्डित (अपने को विद्वान् समझने वाला) अपनी वाणी में सीमित करने का प्रयत्न करेगा तो उसे निश्चय ही, पीछे पश्चात्ताप करना पड़ेगा,

क्योंकि किसी चिन्तक की महिमा को सीमा में बाँधना असम्भव है। बड़े से बड़ा लेखक भी प्रभु की प्रभुता की प्रखरता पर प्रकाश डालने के लिये अपने को अशक्त पाता है, क्योंकि चिन्ताहरण का चिन्तन चित्त का विषय है, लेखनी, स्याही और कागज का नहीं। वाहिगुरु के पावन नाम को जो हृदयङ्गम करता है वही उसे ठीक से समझता है, दूसरा व्यक्ति कथमपि नहीं, क्योंकि प्रभु का नांम 'निरंजन' है उसे ठीक से समझने के लिये मनन-कला का पारखी होना आवश्यक है। मनन के महत्त्व का प्रतिपादन 'ब्रह्मसूत्र' में करते हुए कहा गया है—

श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो मन्तव्यश्चोपपत्तिभिः।
मत्वा च सततं ध्येय एते दर्शनहेतवः ।।

सुभाषित—

ऐसा नामु निरंजनु होइ। जो को मंनि जाणै मनि कोइ।।

ਤੇਰ੍ਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਮੰਨੈ ਸੁਰਤਿ ਹੋਵੈ ਮਨਿ ਬੁਧਿ ।।
ਮੰਨੈ ਸਗਲ ਭਵਣ ਕੀ ਸੁਧਿ ।।
ਮੰਨੈ ਮੁਹਿ ਚੋਟਾ ਨਾ ਖਾਇ ।।
ਮੰਨੈ ਜਮ ਕੈ ਸਾਥਿ ਨ ਜਾਇ ।।
ਐਸਾ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਹੋਇ ।।
ਜੇ ਕੋ ਮੰਨਿ ਜਾਣੈ ਮਨਿ ਕੋਇ ।।੧੩।।

तेरहवीं पउड़ी

मंनै सुरति होवै मनि बुधि ।।
मंनै सगल भवण की सुधि ।।
मंनै मुहि चोटा ना खाइ ।।
मंनै जम कै साथि न जाइ ।।
ऐसा नामु निरंजनु होइ ।।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ।।१३।।

संगति–

नाम का मनन करने वाला यम यातनाओं से कैसे बचता है?

शब्दार्थ–

ਸੁਰਤਿ (सुरति) = प्रीति, तन्मयता। ਸਗਲ (सगल) = सम्पूर्ण। ਭਵਣ (भवण) = भवन लोक। ਸੁਧਿ (सुधि) = बोध। ਮੁਹਿ (मुहि) = मुख पर। ਜਮ (जम) = यम।

भावार्थ–

सच्चे पातशाह के नाम का सच्चे मन और सच्ची तन्मयता से जो सतत रूप से मनन करता है उसका मन और बुद्धि दोनों निर्मल होते हैं। निर्मलता की साक्षात् मूर्ति इस मननशील व्यक्ति को त्रिलोकी में घटने वाले घटनाचक्र का सहज भाव से ही बोध होने लगता है। विश्व के प्राणिमात्र को ब्रह्मरूप मानने वाला कभी भी यम के बन्धन में नहीं पड़ता, अर्थात् उसे यम की यातनाओं से मुक्ति मिल जाती है, क्योंकि उसे मुक्तिदाता सद्गुरु की शरणागति प्राप्त होती है। ऐसे निरंजन को जानने वाला ही उनके विषय में कुछ कह सकता है, अन्य व्यक्ति नहीं; क्योंकि जिसे भगवान् की भक्ति की अभिव्यक्ति होगी, वही उसके सम्बन्ध में अपनी भाव-भावना को प्रकट कर सकता है। गुरु नानकदेव जी के इस संकेत की ओर अद्वैताचार्य शङ्करस्वरूप शङ्कराचार्य ने भी उल्लेख किया है—

दिग्देशकालाद्यनवेक्ष्य सर्वगं
शीतादिहन्नित्यसुखं निरञ्जनम् ।
यः स्वात्मतीर्थं भजते विनिष्क्रियः
स सर्ववित्सर्वगतोऽमृतो भवेत् ।।

सुभाषित–

मंनै जम कै साथि न जाइ।

ਚੌਧਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਮੰਨੈ ਮਾਰਗਿ ਠਾਕ ਨ ਪਾਇ।।
ਮੰਨੈ ਪਤਿ ਸਿਉ ਪਰਗਟੁ ਜਾਇ।।

ਮੰਨੈ ਮਗੁ ਨ ਚਲੈ ਪੰਥੁ ॥
ਮੰਨੈ ਧਰਮ ਸੇਤੀ ਸਨਬੰਧੁ ॥
ਐਸਾ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਹੋਇ ॥
ਜੇ ਕੋ ਮੰਨਿ ਜਾਣੈ ਮਨਿ ਕੋਇ ॥੧੪॥

चौदहवीं पउड़ी

मंनै मारगि ठाक न पाइ ॥
मंनै पति सिउ परगटु जाइ ॥
मंनै मगु न चलै पंथु ॥
मंनै धरम सेती सनबंधु ॥
ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि. कोइ ॥१४॥

संगति–

नाम का मनन करने वाले की सभी बाधाएँ कैसे दूर होती हैं?

शब्दार्थ–

ਠਾਕ (ठाक) = बाधा। ਪਤਿ (पति) = प्रतिष्ठा। ਸਿਉ (सिउ) = साथ। ਮਗੁ (मगु) = मार्ग। ਪੰਥੁ (पंथु) = साम्प्रदायिक पद्धति। ਸੇਤੀ (सेती) = साथ। ਸਨਬੰਧੁ (सनबंधु) = सम्बन्ध।

भावार्थ–

सर्वव्यापक अकाल-पुरुष के नाम़ का मनन करने वाले को बाधाओं के गतिरोध का सामना नहीं करना पड़ता, क्योंकि उसके मार्ग में पड़ने वाली रुकावटें प्रभु की कृपा से स्वयं रुक जाती हैं। साधक प्रतिष्ठा के साथ संसार में आता है, प्रतिष्ठा के साथ यहाँ रहता है और अन्त में प्रतिष्ठा (सत्कार) के साथ ही दाता के द्वार, दर, दरबार की देहली पर माथा टेकता है। विवेकी इस मानव को संसार के मनमत-वाले अपने मत-मतान्तरों की भूलभुलैया में नहीं भटका सकते, क्योंकि उसका सम्बन्ध वास्तविक धर्म से जुड़ा होता है। बाहरी आडम्बर, संसार के तामझाम सच्चे गुरुमुख को किसी भी हालत में अपने

वाहिगुरु से विमुख नहीं कर सकते। ऐसे धर्म-कर्म-निष्ठ कर्मयोगी के विषय में यजुर्वेद (४०/७) में भी कहा है—

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।।

सुभाषित–

मंनै धरम सेती सनबंधु।

ਪੰਦ੍ਰਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਮੰਨੈ ਪਾਵਹਿ ਮੋਖੁ ਦੁਆਰੁ ।।
ਮੰਨੈ ਪਰਵਾਰੈ ਸਾਧਾਰੁ ।।
ਮੰਨੈ ਤਰੈ ਤਾਰੇ ਗੁਰੁ ਸਿਖ ।।
ਮੰਨੈ ਨਾਨਕ ਭਵਹਿ ਨ ਭਿਖ ।।
ਐਸਾ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨੁ ਹੋਇ ।।
ਜੇ ਕੋ ਮੰਨਿ ਜਾਣੈ ਮਨਿ ਕੋਇ ।।੧੫।।

पन्द्रहवीं पउड़ी

मंनै पावहि मोखु दुआरु ।।
मंनै परवारै साधारु ।।
मंनै तरै तारे गुरु सिख ।।
मंनै नानक भवहि न भिख ।।
ऐसा नामु निरंजनु होइ ।।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ।।१५।।

संगति–

अकाल-पुरुष के नाम का मनन करनेवाला घर बैठे कैसे मुक्त हो जाता है?

शब्दार्थ–

ਪਰਵਾਰੈ (परवारै) = परिवार। ਸਾਧਾਰੁ (साधारु) = आधार। ਭਵਹਿ (भवहि) = संसार में। ਭਿਖ (भिख) = भीख, याचना।

भावार्थ–

मनन के महत्त्व की महिमा को मण्डित करने वाली इस पन्द्रहवीं पौड़ी में कहा गया है कि प्रभु के नाम को श्रवण करने के पश्चात् उसके महत्त्व का मनन करने वाला जीव अपने सुकर्मों से मुक्तिधाम में पहुँच जाता है, अर्थात् संसार की चौरासी लाख योनियों के चक्र से मुक्त हो जाता है। इतना ही नहीं, 'आप मुक्त मुक्त करै संसार' की इस गुरुवाणी को चरितार्थ करता हुआ यह गुरुमुख सिख (शिष्य) अपने पूरे परिवार की मुक्ति की आधार-शिला भी बन जाता है, अर्थात् अपने साथ पूरे कुल को भी तार देता है। अपनी मुक्ति के लिये सच्चा साधक संसार के किसी बाहरी साधना या उपकरण का मुहताज नहीं होता, क्योंकि आत्मबोध ही इस साधक का सबल आधार होता है। निरंजन का वास्तविक ज्ञान, भान करने वाला जीव निष्कलंक होकर उस प्रभु का साक्षात्कार करता है।

सुभाषित–

मंनै तरै तारे गुरु सिख।

ਸੋਲ੍ਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਪੰਚ ਪਰਵਾਣ ਪੰਚ ਪਰਧਾਨੁ ।।
ਪੰਚੇ ਪਾਵਹਿ ਦਰਗਹਿ ਮਾਨੁ ।।
ਪੰਚੇ ਸੋਹਹਿ ਦਰਿ ਰਾਜਾਨੁ ।।
ਪੰਚਾ ਕਾ ਗੁਰੁ ਏਕੁ ਧਿਆਨੁ ।।
ਜੇ ਕੋ ਕਹੈ ਕਰੈ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਕਰਤੇ ਕੈ ਕਰਣੈ ਨਾਹੀ ਸੁਮਾਰੁ ।।
ਧੌਲੁ ਧਰਮੁ ਦਇਆ ਕਾ ਪੂਤੁ ।।
ਸੰਤੋਖੁ ਥਾਪਿ ਰਖਿਆ ਜਿਨਿ ਸੂਤਿ ।।
ਜੇ ਕੋ ਬੁਝੈ ਹੋਵੈ ਸਚਿਆਰੁ ।।
ਧਵਲੈ ਉਪਰਿ ਕੇਤਾ ਭਾਰੁ ।।
ਧਰਤੀ ਹੋਰੁ ਪਰੈ ਹੋਰੁ ਹੋਰੁ ।।
ਤਿਸ ਤੇ ਭਾਰੁ ਤਲੈ ਕਵਣੁ ਜੋਰੁ ।।

ਜੀਅ ਜਾਤਿ ਰੰਗਾ ਕੇ ਨਾਵ ॥
ਸਭਨਾ ਲਿਖਿਆ ਵੁੜੀ ਕਲਾਮ ॥
ਏਹੁ ਲੇਖਾ ਲਿਖਿ ਜਾਣੈ ਕੋਇ ॥
ਲੇਖਾ ਲਿਖਿਆ ਕੇਤਾ ਹੋਇ ॥
ਕੇਤਾ ਤਾਣੁ ਸੁਆਲਿਹੁ ਰੂਪੁ ॥
ਕੇਤੀ ਦਾਤਿ ਜਾਣੈ ਕੌਣੁ ਕੂਤੁ ॥
ਕੀਤਾ ਪਸਾਉ ਏਕੋ ਕਵਾਉ ॥
ਤਿਸ ਤੇ ਹੋਏ ਲਖ ਦਰੀਆਉ ॥
ਕੁਦਰਤਿ ਕਵਣ ਕਹਾ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਵਾਰਿਆ ਨ ਜਾਵਾ ਏਕ ਵਾਰ ॥
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸਾਈ ਭਲੀ ਕਾਰ ॥
ਤੂ ਸਦਾ ਸਲਾਮਤਿ ਨਿਰੰਕਾਰ ॥੧੬॥

सोलहवीं पउड़ी

पंच परवाण पंच परधानु ॥
पंचे पावहि दरगहि मानु ॥
पंचे सोहहि दरि राजानु ॥
पंचा का गुरु एकु धिआनु ॥
जे को कहै करै वीचारु ॥
करते कै करणै नाही सुमारु ॥
धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥
संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥
जे को बुझै होवै सचिआरु ॥
धवलै उपरि केता भारु ॥
धरती होरु परै होरु होरु ॥
तिस ते भारु तलै कवणु जोरु ॥
जीअ जाति रंगा के नाव ॥

सभना लिखिआ वुड़ी कलाम ।।
एहु लेखा लिखि जाणै कोइ ।।
लेखा लिखिआ केता होइ ।।
केता ताणु सुआलिहु रूपु ।।
केती दाति जाणै कौणु कूतु ।।
कीता पसाउ एको कवाउ ।।
तिस ते होए लख दरीआउ ।।
कुदरति कवण कहा वीचारु ।।
वारिआ न जावा एक वार ।।
जो तुधु भावै साई भली कार ।।
तू सदा सलामति निरंकार ।।१६।।

संगति–

निदिध्यासन (तन्मयता) से आकार नष्ट होने पर भी निराकार कैसे दृष्टि-गोचर होता है?

शब्दार्थ–

ਪੰਚ (पंच) = मुखिया। ਪਰਵਾਣ (परवाण) = प्रमाण। ਪਰਧਾਨੁ (परधानु) = शिरोमणि। ਦਰਗਹਿ (दरगहि) = धर्मक्षेत्र। ਦਰਿ (दरि) = दरबार, दर। ਏਕੁ ਧਿਆਨੁ (एकु पिआनु) = एक मत। ਸੁਭਾਰੁ (सुभारु) = अन्त। ਧੌਲੇ (धौले) = धवल, सफेद। ਦਇਆ (दइया) = दया। ਥਾਪਿ (थापि) = स्थापना। ਸੁਤਿ (सुति) = सृष्टि। ਕੇਤਾ (केता) = कितना। ਹੋਰੁ (होरु) = और। ਤਿਸਤੇ (तिसते) = उसके। ਸਭਨਾ (सभना) = सभी ने। ਵੁੜੀ (वुड़ी) = बड़ी, चलती हुई। ਕਲਾਮ (कलाम) = लेखनी। ਤਾਣੁ (ताणु) = बल। ਸੁਆਲਿਹੁ (सुआलिहु) = सौन्दर्य, शक्ति। ਦਾਲਿ (दालि) = वरदान। ਕੂਤੁ (कूतु) = सामर्थ्य। ਏਕੋਰਵਾਉ (एकोरवाउ) = एक शब्द से बल। ਪਸਾਉ (पसाउ) = प्रसार। ਤੁਧੁ (तुधु) = तुम्हें। ਸਲਾਮਤਿ (सलामति) = स्थिर।

भावार्थ–

चार पौड़ियों में नाम श्रवण और चार पौड़ियों में नाम-मनन करने वालों की महिमा सुनने के बाद सिद्धों ने गुरु नानकदेव जी से निदिध्यासन का

अवलम्बन करने वाले महात्माओं के महत्त्व के सम्बन्ध में जिज्ञासा की। इसी का उत्तर देते हुए कहा गया है—जिन साधकों ने सत्य, सन्तोष, धैर्य, दया इन पाँचों का ध्यान किया है वे सदा प्रामाणिक हैं अर्थात् सत्कार के योग्य हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध की जनक ज्ञानेन्द्रियों (कर्णेन्द्रिय, त्वचा, चक्षु, जिह्वा, नासिका) को जिन्होंने अपने वश में किया है वे सन्तशिरोमणि हैं। क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर—इन पाँच महाभूत तत्त्वों के गुण—धीरता (क्षमा), शीतलता, तेजस्विता, उदारता, समता को जिन ज्ञानियों ने अपने जीवन में ढाला है, वे श्रेष्ठ समाज में समादर के पात्र हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पर जिन्होंने विजय प्राप्त की है, वे ही सन्त सत्यस्वरूप ईश्वर के दरबार के दर्शन के अधिकारी हैं। इन ब्रह्मज्ञानियों का एकमात्र परमात्मा गुरु है और वे उसी का केवल श्रवण, मनन और चिन्तन करते हैं, अर्थात् अकाल-पुरुष ही उनके ध्यान के केन्द्र हैं। जगदीश के गुणों का सम्पूर्ण विचार करना कठिन है, क्योंकि उसके रचना संसार का विस्तार ही समझने में जीव असमर्थ है। अर्थात् कोरी तार्किक शक्ति से प्रभु की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि असीम की कीर्ति को ससीम नहीं किया जा सकता। धवल (बैल) तो धर्म ही है इसे महाभारत में 'धर्मो वृषः' कहा गया है और यह दया का पुत्र भी है, जिसने अपने सन्तोष से सम्पूर्ण संसार, स्थावर, जंगम को मर्यादित कर रखा है। अगर तर्कशक्ति से यह सत्य मान भी लिया जाये कि पृथ्वी बैल पर आश्रित है तो फिर जिज्ञासा होगी कि बैल किस पर खड़ा है, इस प्रकार अनेक बैलों और अनेक पृथ्वियों की कल्पना करनी होगी, जिससे अनवस्था दोष होगा। अतः अन्ततोगत्वा स्वीकार करना पड़ता है कि निखिल 'भू' प्रभु के आश्रित है। ईश्वर की इस रचना में अनेक रूप-रंग की जातियाँ और जीव हैं, जिनकी भाग्य-रेखाएँ उनके भाल पर भगवान् ने उनके कर्मों के आधार पर लिखी हैं। सृष्टि की रचना को यहाँ संक्षेप में कहा गया है। ईश्वर की सृष्टि का चित्रण करने यदि कोई चतुर बैठे तो उसका लेख कितना बड़ा होगा? भगवान् का बल, रूप, उसकी देन, शक्ति, औदार्य, सौन्दर्य आदि का पता कैसे लगेगा? निष्कर्ष यह है कि प्रभु की रचना और उसके गुणों का वर्णन करने की पूरी शक्ति किसी में नहीं। गुरु नानकदेव जी अपने मूल सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि यह सम्पूर्ण सृष्टि प्रसार एक शब्द (ब्रह्म) से हुआ है, जिसमें लाखों सागर प्रवाहित हैं। प्रभु के संकल्प मात्र से यह रचना हुई है और उसके एक रोम में करोड़ों ब्रह्माण्ड स्थित हैं, भला उसकी कुदरत का कौन वर्णन कर सकता है। बस, आपको जो अच्छा लगे आप

करें, क्योंकि 'तेरा भाणा मीठा लागै।' हे निरंकार, इस चलायमान संसार में आप ही सदा स्थिर रहने वाले हैं।

सुभाषित–

जो तुधु भावै साई भली कार। तू सदा सलामति निरंकार।।

ਸਤਾਰ੍ਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਅਸੰਖ ਜਪ ਅਸੰਖ ਭਾਉ ।।
ਅਸੰਖ ਪੂਜਾ ਅਸੰਖ ਤਪ ਤਾਉ ।।
ਅਸੰਖ ਗਰੰਥ ਮੁਖਿ ਵੇਦ ਪਾਠ ।।
ਅਸੰਖ ਜੋਗ ਮਨਿ ਰਹਹਿ ਉਦਾਸ ।।
ਅਸੰਖ ਭਗਤ ਗੁਣ ਗਿਆਨ ਵੀਚਾਰ ।।
ਅਸੰਖ ਸਤੀ ਅਸੰਖ ਦਾਤਾਰ ।।
ਅਸੰਖ ਸੂਰ ਮੁਹ ਭਖ ਸਾਰ ।।
ਅਸੰਖ ਮੋਨਿ ਲਿਵ ਲਾਇ ਤਾਰ ।।
ਕੁਦਰਤਿ ਕਵਣ ਕਹਾ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਵਾਰਿਆ ਨ ਜਾਵਾ ਏਕ ਵਾਰ ।।
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸਾਈ ਭਲੀ ਕਾਰ ।।
ਤੂ ਸਦਾ ਸਲਾਮਤਿ ਨਿਰੰਕਾਰ ।।੧੭।।

सतरहवीं पउड़ी

असंख जप असंख भाउ ।।
असंख पूजा असंख तप ताउ ।।
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ ।।
असंख जोग मनि रहहि उदास ।।
असंख भगत गुण गिआन वीचार ।।
असंख सती असंख दातार ।।
असंख सूर मुह भख सार ।।

असंख मोनि लिव लाइ तार ॥
कुदरति कवण कहा वीचारु ॥
वारिआ न जावा एक वार ॥
जो तुधु भावै साई भली कार ॥
तू सदा सलामति निरंकार ॥१७॥

संगति–

निदिध्यासन से दैवी संपदा की प्राप्ति कैसे होती है?

शब्दार्थ–

ਅਸੰਖ (असंख) = असंख्य। ਭਾਉ (भाउ) = भाव। ਗਰੰਥ (गरंथ) = ग्रन्थ। ਗਿਆਨ (गिआन) = ज्ञान। ਸਤੀ (सती) = सत्यनिष्ठ। ਸਾਰ (सार) = शस्त्र, तलवार। ਭਖ (भख) = घाव।

भावार्थ–

इस पौड़ी में सृष्टि की दैवी सम्पदाएँ और सृष्टि के सात्त्विक रूप का चित्रण करते हुए गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि यहाँ साधक के सम्मुख वाचिक, उपांसू, मानसिक जपों की विधियाँ भी असंख्य हैं और जापक के लिए एकाक्षरी मन्त्र 'ओं', पञ्चाक्षरी 'नमः शिवाय', द्वादशाक्षरी 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय', चौबीस (चतुर्विंशति) अक्षरी गायत्री मन्त्र और ३८ अक्षरों वाला महामन्त्र— '१ओंकार सतिनाम करता पुरुखु निभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि' आदि मन्त्रों की संख्या भी असंख्य है। रति, हास, शोक आदि स्थायीभाव, प्रेम, पूजाविधि, तप और तपस्वी भी असंख्य हैं। चार वेद, षड् दर्शन शास्त्र आदि ग्रन्थ हैं। उदासीन, योगी, भगत, सत्यवादी, दानवीर, शूरवीर की संख्या भी असीम है, जो धर्म-कर्म हेतु युद्ध में सहर्ष अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार सहते हैं। मौन होकर सदा सच्चिदानन्द के ध्यान में तल्लीन रहने वाले सात्त्विक सज्जन साधकों की संख्या भी संख्यातीत है। अतः आपके यशगान का सामर्थ्य हम में नहीं—आप सदा सनातन, सत्य और स्थायी हैं और आपकी इच्छा, हुकम ही सर्वोपरि है।

सुभाषित–

कुदरति कवण कहा वीचारु। वारिआ न जावा एक वार॥

ਅਠਾਰ੍ਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਅਸੰਖ ਮੂਰਖ ਅੰਧ ਘੋਰ ॥
ਅਸੰਖ ਚੋਰ ਹਰਾਮਖੋਰ ॥
ਅਸੰਖ ਅਮਰ ਕਰਿ ਜਾਹਿ ਜੋਰ ॥
ਅਸੰਖ ਗਲਵਢ ਹਤਿਆ ਕਮਾਹਿ ॥
ਅਸੰਖ ਪਾਪੀ ਪਾਪੁ ਕਰਿ ਜਾਹਿ ॥
ਅਸੰਖ ਕੂੜਿਆਰ ਕੂੜੇ ਫਿਰਾਹਿ ॥
ਅਸੰਖ ਮਲੇਛ ਮਲੁ ਭਖਿ ਖਾਹਿ ॥
ਅਸੰਖ ਨਿੰਦਕ ਸਿਰਿ ਕਰਹਿ ਭਾਰੁ ॥
ਨਾਨਕੁ ਨੀਚੁ ਕਹੈ ਵੀਚਾਰੁ ॥
ਵਾਰਿਆ ਨ ਜਾਵਾ ਏਕ ਵਾਰ ॥
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸਾਈ ਭਲੀ ਕਾਰ ॥
ਤੂ ਸਦਾ ਸਲਾਮਤਿ ਨਿਰੰਕਾਰ ॥੧੮॥

अठारहवीं पउड़ी

असंख मूरख अंध घोर ॥
असंख चोर हरामखोर ॥
असंख अमर करि जाहि जोर ॥
असंख गलवढ हतिआ कमाहि ॥
असंख पापी पापु करि जाहि ॥
असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि ॥
असंख मलेछ मलु भखि खाहि ॥
असंख निंदक सिरि करहि भारु ॥
नानकु नीचु कहै वीचारु ॥
वारिआ न जावा एक वार ॥
जो तुधु भावै साई भली कार ॥
तू सदा सलामति निरंकार ॥१८॥

संगति–

निदिध्यासन से तामसी और राजसी सृष्टि का बोध कैसे होता है?

शब्दार्थ–

ਅਮਰ (अमर) = हुकम। ਗਲਵਢ (गलवढ़) = गला काटने वाले। ਕੂੜਿਆਰ (कूड़िआर) = झूठ बोलने वाले। ਮਲੁ (मलु) = मैला, गन्दा। ਭਖਿ (भखि) = खाना। ਨੀਚੁ (नीचु) = दास, नम्र।

भावार्थ–

इस पौड़ी में गुरु नानकदेव जी ने उन अज्ञानी लोगों का वर्णन किया है जो अकाल-पुरुष के विमुख होकर अपने स्वार्थ साधन में तामसी और आसुरी वृत्तियों का सहारा लेते हैं। इनमें प्रथम प्रकार के लोगों को मूर्ख कहा गया है जो समझाने के बाद कुछ समझ जाते हैं, दूसरे प्रकार के लोग अंध हैं जो समझाने के बाद भी जड़वत् अपनी बात पर अड़े रहते हैं, तीसरा प्रकार उन 'घोर' लोगों का है जो केवल दूसरों के भरोसे वैतरणी पार करने की आशा करते हैं। असंख्य चोर इस संसार में हैं और हरामखोर भी, जिनका कार्य केवल छल-कपट से दूसरों का हक मारना और खून-खराबा करना होता है। अपने जोर, जुल्म से अपनी बात मनाने वाले, दूसरों की अकारण हत्या करने वाले, अनेक प्रकार का पापाचरण करने वाले, असत्य बोलने वाले अनगिनत लोग मृत्यु का ग्रास बनते हैं। अपनी जिह्वा के स्वाद के लिये अन्य प्राणियों की हत्या करके भक्षण करने वाले भी असंख्य लोग हैं। निन्दक लोगों की संख्या भी बहुत बड़ी है जो अपने पर-निन्दा रूप कार्यों से बार-बार विविध योनियों में पड़कर उल्टे लटकते हैं, अर्थात् ८४ लाख योनियों में भ्रमण करते हैं। गुरु नानकदेव जी कहते हैं, हे सिद्धो! हमने यहाँ तामसी और राजसी विचार वालों का विचार किया जो अपने नीच कर्मों द्वारा अपना स्वार्थ साधन करते हैं। परमात्मा के एक रोम का भी वर्णन करना हमारी शक्ति में नहीं है। अतः हे निरंकार! तेरी भाणा (इच्छा) में ही हमारी भलाई है, क्योंकि आप सदा स्थायी हैं। गुरु नानकदेव जी की नम्रता, निरीहता का दर्शन यहाँ होता है, जब वे अपने को भी छोटी (नीच) श्रेणी में रखते हैं, धन्य हैं ये पुण्यात्मा।

सुभाषित–

असंख निंदक सिरि करहि भारु।
नानक नीचु कहै वीचारु।।

ਉਨੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਅਸੰਖ ਨਾਵ ਅਸੰਖ ਥਾਵ ।।
ਅਗੰਮ ਅਗੰਮ ਅਸੰਖ ਲੋਅ ।।
ਅਸੰਖ ਕਹਹਿ ਸਿਰਿ ਭਾਰੁ ਹੋਇ ।।
ਅਖਰੀ ਨਾਮੁ ਅਖਰੀ ਸਾਲਾਹ ।।
ਅਖਰੀ ਗਿਆਨੁ ਗੀਤ ਗੁਣ ਗਾਹ ।।
ਅਖਰੀ ਲਿਖਣੁ ਬੋਲਣੁ ਬਾਣਿ ।।
ਅਖਰਾ ਸਿਰਿ ਸੰਜੋਗੁ ਵਖਾਣਿ ।।
ਜਿਨਿ ਏਹਿ ਲਿਖੇ ਤਿਸੁ ਸਿਰਿ ਨਾਹਿ ।।
ਜਿਵ ਫੁਰਮਾਏ ਤਿਵ ਤਿਵ ਪਾਹਿ ।।
ਜੇਤਾ ਕੀਤਾ ਤੇਤਾ ਨਾਉ ।।
ਵਿਣੁ ਨਾਵੈ ਨਾਹੀ ਕੋ ਥਾਉ ।।
ਕੁਦਰਤਿ ਕਵਣ ਕਹਾ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਵਾਰਿਆ ਨ ਜਾਵਾ ਏਕ ਵਾਰ ।।
ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵੈ ਸਾਈ ਭਲੀ ਕਾਰ ।।
ਤੂ ਸਦਾ ਸਲਾਮਤਿ ਨਿਰੰਕਾਰ ।।੧੯।।

उन्नीसवीं पउड़ी

असंख नाव असंख थाव ।।
अगंम अगंम असंख लोअ ।।
असंख कहहि सिरि भारु होइ ।।
अखरी नामु अखरी सालाह ।।
अखरी गिआनु गीत गुण गाह ।।
अखरी लिखणु बोलणु बाणि ।।
अखरा सिरि संजोगु वखाणि ।।
जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि ।।

जिव फुरमाए तिव तिव पाहि ।।
जेता कीता तेता नाउ ।।
विणु नावै नाही को थाउ ।।
कुदरति कवण कहा वीचारु ।।
वारिआ न जावा एक वार ।।
जो तुधु भावै साई भली कार ।।
तू सदा सलामति निरंकार ।।१९।।

संगति–

निदिध्यासन से सर्वत्र भगवान् की सत्ता का साक्षात्कार कैसे होता है?

शब्दार्थ–

ਥਾਵ (थाव) = स्थान। ਅਗੰਮ (अगंम) = अगम्य, वाणी का विषय न हो। ਸਾਲਾਹ (सालाह) = स्तुति। ਸਿਰਿ (सिरि) = भावे का लेख। ਜਿਹ (जिह) = जैसा। ਫੁਰਮਾਏ (फुरमाए) = आज्ञा। ਤਿਹ ਤਿਹ (तिह तिह्) = वैसे वैसे। ਜੇਤਾ (जेता) = जितना। ਤੇਤਾ (तेता) = उतना।

भावार्थ–

इस पौड़ी में परमपिता परमात्मा के नामों और स्थानों के बारे में जगी जिज्ञासाओं का उत्तर गुरु नानकदेव जी देते हुए कहते हैं—भगवान् के नामों की संख्या कैसे बताई जा सकती है। 'विष्णुसहस्रनाम' में हजार नाम कहे गये हैं, कुछ लोग केवल खुदा, गॉड कहकर ही नाम को मान्यता देते हैं। भगवान् के नामों की तरह उनके स्थान भी अनन्त हैं, क्योंकि जो प्रभु सर्वव्यापक है उसे केवल मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे या गिरजाघर में सीमित कैसे किया जा सकता है। अकाल-पुरुष, मन-वाणी-शरीर की पहुँच के बाहर हैं। असंख्य लोक (चौदह भुवन आदि) उसी से प्रकाशित हैं। परमात्मा के नामों को असंख्य कहना ही ठीक है, क्योंकि उसके नामों की गिनती हो ही नहीं सकती। ईश्वर का नाम जपना, प्रशंसा, स्तुतिगान, गीत गाना, गुणों का वर्णन करना, विचार करना, लिखना, बोलना सब कुछ अक्षरों के ही अधीन है, क्योंकि जो कुछ भी किया जाता है उसमें अक्षर होते हैं। जीव मात्र के माथे पर कर्म-रेखाएँ लिखित हैं, परन्तु सभी के माथे पर लिखने वाले प्रभु के मस्तिष्क पर कोई रेखा नहीं हैं।

ब्रह्मा भी जीवों की भाग्यरेखा, अकाल-पुरुष के आदेश से ही लिखते हैं। उच्च स्थान प्राप्त करने वालों ने नाम का स्मरण किया है, बिना नाम-श्रवण, मनन और ध्यान के किसी को परम धाम की प्राप्ति नहीं हो सकती। अतः उस निरंकार का पूर्ण गुणगान करना असम्भव है, उसकी इच्छा में ही जीव का कल्याण है, क्योंकि प्रभु अजर और अमर है।

सुभाषित–

जेता कीता तेता नाउ।

आचरणम्

(व्यवहार)

ਵੀਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਭਰੀਐ ਹਥੁ ਪੈਰੁ ਤਨੁ ਦੇਹ ।।
ਪਾਣੀ ਧੋਤੈ ਉਤਰਸੁ ਖੇਹ ।।
ਮੂਤ ਪਲੀਤੀ ਕਪੜੁ ਹੋਇ ।।
ਦੇ ਸਾਬੂਣੁ ਲਈਐ ਓਹੁ ਧੋਇ ।।
ਭਰੀਐ ਮਤਿ ਪਾਪਾ ਕੈ ਸੰਗਿ ।।
ਓਹੁ ਧੋਪੈ ਨਾਵੈ ਕੈ ਰੰਗਿ ।।
ਪੁੰਨੀ ਪਾਪੀ ਆਖਣੁ ਨਾਹਿ ।।
ਕਰਿ ਕਰਿ ਕਰਣਾ ਲਿਖਿ ਲੈ ਜਾਹੁ ।।
ਆਪੇ ਬੀਜਿ ਆਪੇ ਹੀ ਖਾਹੁ ।।
ਨਾਨਕ ਹੁਕਮੀ ਆਵਹੁ ਜਾਹੁ ।।੨੦।।

बीसवीं पउड़ी

भरीऐ हथु पैरु तनु देह ।।
पाणी धोतै उतरसु खेह ।।
मूत पलीती कपड़ु होइ ।।
दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ।।
भरीऐ मति पापा कै संगि ।।
ओहु धोपै नावै कै रंगि ।।
पुंनी पापी आखणु नाहि ।।

करि करि करणा लिखि लै जाहु ।।
आपे बीजि आपे ही खाहु ।।
नानक हुकमी आवहु जाहु ।।२०।।

संगति–

भगवान् की महिमा से बुद्धि शुद्ध कैसे होती है?

शब्दार्थ–

ਤਨੁ (तनु) = शरीर। ਪਾਣੀ (पाणी) = जल। ਪਲੀਤੀ (पलीती) = अपवित्र। ਧੋਪੈ (धोपै) = धुलना। ਨਾਵੈ (नावै) = प्रभु के नाम से। ਪੁੰਨਿ (पुंनि) = पुण्यात्मा। ਕਰਣਾ (करणा) = कर्म।

भावार्थ–

सांसारिक मोह-माया में मग्न बुद्धि की शुद्धि कैसे सम्भव है? इसका उत्तर सिद्धों को गुरु नानकदेव जी देते हुए कहते हैं—'पापरूपी मल से मलिन बुद्धि प्रभु के पावन नाम स्मरण से होती है। एक लौकिक दृष्टान्त से अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि जैसे धूलि—धूसरित हाथ, पाँव, शरीर जल से धोने पर अच्छी तरह पवित्र हो जाते हैं, परन्तु पेशाब (लघुशंका) आदि से अपवित्र वस्त्र केवल जल से नहीं, अपितु साबुन (फेनिल) लगाने से ही पूरी तरह से स्वच्छ और पवित्र होते हैं, वैसी ही बुद्धि की शुद्धता के लिए केवल परमात्मा का पवित्र नाम ही समर्थ है। हाथ, पैर, शरीर, कपड़ा आदि स्थूल पदार्थ हैं, अतः इनकी शुद्धि भी पानी, साबुन आदि स्थूल पदार्थों से कही गयी है, परन्तु बुद्धि तो सूक्ष्म है, इसलिए उसकी शुद्धता भी सूक्ष्म नाम से ही प्रतिपादित की गयी है।

नाम स्मरण से असंख्य लोग पुण्यात्मा हो गये हैं जिनकी गणना असम्भव है। इस संसार में जीव जो जो कर्म अपने हाथों द्वारा करता है उसे ईश्वर के दूत लिखकर ले जाते हैं। जीव के दायें हाथ और बायें हाथ के कन्धों पर बैठकर देवदूत क्रमशः दिन और रात की घटित घटनाओं को लिखते हैं। इसी लिखित कर्म-कुण्डली को ईश्वर के सम्मुख रखा जाता है, जिसके अनुसार जीव को अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता है। अर्थात् जीव अपने जीवनकाल में जो बोता है उसी को काटता है भोगता है और संसार में आता एवं संसार से प्रस्थान करता है। सच तो यह है वहाँ कर्म-कुण्डली का ही महत्त्व है, सांसारिक जन्म-कुण्डली की वहाँ कोई गणना नहीं है।

सुभाषित–

आपे बीजि आपे ही खाहु। नानक हुकमी आवहु जाहु।।

ਇਕੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਤੀਰਥੁ ਤਪੁ ਦਇਆ ਦਤੁ ਦਾਨੁ ।।
ਜੇ ਕੋ ਪਾਵੈ ਤਿਲ ਕਾ ਮਾਨੁ ।।
ਸੁਣਿਆ ਮੰਨਿਆ ਮਨਿ ਕੀਤਾ ਭਾਉ ।।
ਅੰਤਰਗਤਿ ਤੀਰਥਿ ਮਲਿ ਨਾਉ ।।
ਸਭਿ ਗੁਣ ਤੇਰੇ ਮੈ ਨਾਹੀ ਕੋਇ ।।
ਵਿਣੁ ਗੁਣ ਕੀਤੇ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਇ ।।
ਸੁਅਸਤਿ ਆਥਿ ਬਾਣੀ ਬਰਮਾਉ ।।
ਸਤਿ ਸੁਹਾਣੁ ਸਦਾ ਮਨਿ ਚਾਉ ।।
ਕਵਣੁ ਸੁ ਵੇਲਾ ਵਖਤੁ ਕਵਣੁ ਕਵਣ ਥਿਤਿ ਕਵਣੁ ਵਾਰੁ ।।
ਕਵਣਿ ਸਿ ਰੁਤੀ ਮਾਹੁ ਕਵਣੁ ਜਿਤੁ ਹੋਆ ਆਕਾਰੁ ।।
ਵੇਲ ਨ ਪਾਈਆ ਪੰਡਤੀ ਜਿ ਹੋਵੈ ਲੇਖੁ ਪੁਰਾਣੁ ।।
ਵਖਤੁ ਨ ਪਾਇਓ ਕਾਦੀਆ ਜਿ ਲਿਖਨਿ ਲੇਖੁ ਕੁਰਾਣੁ ।।
ਥਿਤਿ ਵਾਰੁ ਨਾ ਜੋਗੀ ਜਾਣੈ ਰੁਤਿ ਮਾਹੁ ਨਾ ਕੋਈ ।।
ਜਾ ਕਰਤਾ ਸਿਰਠੀ ਕਉ ਸਾਜੇ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਸੋਈ ।।
ਕਿਵ ਕਰਿ ਆਖਾ ਕਿਵ ਸਾਲਾਹੀ ਕਿਉ ਵਰਨੀ ਕਿਵ ਜਾਣਾ ।।
ਨਾਨਕ ਆਖਣਿ ਸਭੁ ਕੋ ਆਖੈ ਇਕ ਦੂ ਇਕੁ ਸਿਆਣਾ ।।
ਵਡਾ ਸਾਹਿਬੁ ਵਡੀ ਨਾਈ ਕੀਤਾ ਜਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ।।
ਨਾਨਕ ਜੇ ਕੋ ਆਪੌ ਜਾਣੈ ਅਗੈ ਗਇਆ ਨ ਸੋਹੈ ।।੨੧।।

इक्कीसवीं पउड़ी

तीरथु तपु दइआ दतु दानु ।।
जे को पावै तिल का मानु ।।
सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ ।।

अंतरगति तीरथि मलि नाउ ।।
सभि गुण तेरे मै नाही कोइ ।।
विणु गुण कीते भगति न होइ ।।
सुअसति आथि बाणी बरमाउ ।।
सति सुहाणु सदा मनि चाउ ।।
कवणु सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वारु ।।
कवणि सि रुती माहु कवणु जितु होआ आकारु ।।
वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु ।।
वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु ।।
थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई ।।
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ।।
किव करि आखा किव सालाही किउ वरनी किव जाणा ।।
नानक आखणि सभु को आखै इक दू इकु सिआणा ।।
वडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै ।।
नानक जे को आपौ जाणै अगै गइआ न सोहै ।।२१।।

संगति–

तीर्थाटन, सकाम और निष्काम भावना से फल कैसे देता है?

शब्दार्थ–

ਦਤੁ (दतु) = दिया हुआ। ਤਿਲ ਕਾ ਮਾਨ (तिल का मान) = थोड़ा, अनित्य। ਮਨਿਕੀਤਾ (मनिकीता) = आचरण किया हुआ। ਅੰਤਰਗਤਿ ਤੀਰਥਿ (अंतरगति तीरथि) = मानस तीर्थ। ਨਾਉ (नाउ) = नाम। ਸੁਅਸਤਿ (सुअसति) = शक्ति। ਆਥਿ (आथि) = लक्ष्मी। ਬਾਣੀ (बाणी) = सरस्वती। ਬਰਮਾਉ (बरमाउ) = ब्रह्मा। ਸਤਿ (सति) = सत्य। ਸੁਹਾਣੁ (सुहाणु) = सुन्दर। ਮਨਿ ਚਾਉ (मनि चाउ) = चित्त-स्वरूप, आनन्दस्वरूप। ਕਵਣੁ (कवणु) = कौन, कब। ਆਕਾਰ (आकार) = साकार सृष्टि। ਸਿਰਠੀ (सिरठी) = सृष्टि, रचना। ਕਿਵ ਕਰ (किव कर) = कुछ। ਆਖਾ (आखा) = कथन। ਇਕ ਦੂ ਇਕ (इक दू इक) = एक से एक। ਸਿਆਣਾ

(सिआणा) = समझदार, विद्वान्। ਆਪੈ ਜਾਣੈ (आपै जाणै) = पण्डितमानी, अपने को विद्वान् मानने वाला।

भावार्थ–

इस पौड़ी में गुरु नानकदेव जी बाह्य तीर्थ और आभ्यन्तर (आत्मतीर्थ) का अन्तर समझाते हुए सिद्धों से कहते हैं कि कर्म दो प्रकार के हैं, एक सकाम और दूसरा निष्काम। तीर्थ, तप, दया, दान, यज्ञ आदि सकाम कर्म हैं और इनका फल अस्थायी या अल्पकालीन होता है। अर्थात् कर्मों द्वारा प्राप्त पुण्य क्षीण होते ही जीव पुनः मृत्युलोक में आ जाता है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन (समाधि, उपासना) आदि कार्य निष्काम कर्म हैं, जिनका फल स्थायी एवं चिरकालीन होता है, जिससे तत्त्वज्ञानी अपने आत्मतीर्थ में स्नान कर निर्दोष और निष्कलुष बनता है। इस पदवी को पाने के लिये प्रभु के सम्मुख आत्म-समर्पण की आवश्यकता है, क्योंकि बिना इस गुण के अकाल-पुरुष की भक्ति दुर्लभ है। कल्याणस्वरूप भगवान् के सत्संकल्प से वाणी की रचना हुई और इसके पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश उत्पन्न हुए और शेष सृष्टि की उत्पत्ति हुई। सृष्टिकर्ता प्रभु सत्-चित्-आनन्द स्वरूप हैं, इसीलिए इन्हें सच्चिदानन्द कहा जाता है।

सृष्टि कब, कैसे हुई? अर्थात् संसार के प्रारम्भ के समय दिन, तिथि और समय क्या था? ऐसी जिज्ञासा सिद्धों द्वारा करने पर सद्गुरु नानकदेव जी कहते हैं—इसका उत्तर देना असम्भव है, क्योंकि इस सम्बन्ध में पुराण के पाँच लक्षण (सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, वंशानुचरित) बनाने वाले महर्षि व्यास जैसे पौराणिकों ने भी कहीं कुछ नहीं लिखा और न ही मुस्लिम धर्म के काजियों (धर्मगुरुओं) ने ही अपने कुरान शरीफ में इस सृष्टि के समय का कहीं उल्लेख किया है। अतः इस विषय में कैसे कुछ निश्चित रूप से कहा जा सकता है। अनन्तकोटि-ब्रह्माण्डनायक के यशगान और उनके कार्यों को वे ही प्रभु स्वयं जान सकते हैं, क्योंकि ज्येष्ठ, श्रेष्ठ और प्रेष्ठ एकमात्र वे ही हैं। अगर कोई विद्याभिमानी अपने बुद्धि-बल से अकाल-पुरुष के कार्यों का पूर्ण वर्णन करने का दम्भ भरता है तो उसे अन्त में सच्चे दरबार में लज्जित और अपमानित होना पड़ेगा।

सुभाषित–

सभि गुण तेरे मै नाही कोइ।। विणु गुण कीते भगति न होइ।।

ਬਾਈਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਪਾਤਾਲਾ ਪਾਤਾਲ ਲਖ ਆਗਾਸਾ ਆਗਾਸ।।
ਓੜਕ ਓੜਕ ਭਾਲਿ ਥਕੇ ਵੇਦ ਕਹਨਿ ਇਕ ਵਾਤ ।।
ਸਹਸ ਅਠਾਰਹ ਕਹਨਿ ਕਤੇਬਾ ਅਸੁਲੂ ਇਕੁ ਧਾਤੁ ।।
ਲੇਖਾ ਹੋਇ ਤ ਲਿਖੀਐ ਲੇਖੈ ਹੋਇ ਵਿਣਾਸੁ ।।
ਨਾਨਕ ਵਡਾ ਆਖੀਐ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਆਪੁ ।।੨੨।।

बाईसवीं पउड़ी

पाताला पाताल लख आगासा आगास ।।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात।।
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु ।।
लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ।।
नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु ।।२२।।

संगति–

परमात्मा की सृष्टि का वर्णन असम्भव क्यों है?

शब्दार्थ–

ਪਾਤਾਲਾ (पाताला) = पाताल। ਆਗਾਸਾ (आगासा) = आकाश। ਓੜੀਕ (ओड़क) = अन्त में। ਅਸੁਲੂ (असुलू) = असल में, वास्तव में। ਵਿਣਾਸੁ (विणासु) = विनाश। ਵਡਾ (बडा) = बड़ा।

भावार्थ–

इस पौड़ी में भगवान् की असीम महिमा की तरह उसकी रचना को भी असीम कहा है। पूर्वधारणा या मान्यता है कि सात पाताल और सात आकाश हैं एवं पृथ्वी और पर्वतों का भी प्रमाण एवं परिमाण है। इस विश्वास के विपरीत गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि पातालों के नीचे लाख पाताल और आकाशों के ऊपर लाखों आकाश हैं, क्योंकि ईश्वर के एक-एक क्षेत्र में करोड़ों ब्रह्माण्ड हैं। सृष्टि और सृष्टिकर्ता के सम्बन्ध में उल्लेख करने वाले वैदिक ऋषि, महर्षि महात्मा भी अन्त में इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि प्रभु की महिमा का पता लगाना कठिन है। कहा गया है कि मुस्लिम धर्म के केन्द्र मक्का, मदीना, कर्बला

होते हुए गुरु नानकदेव जी अपनी तीसरी उदासी (यात्रा) में जब बगदाद पहुँचे तो वहाँ आपने इसी पौड़ी को ब्राह्म मुहूर्त में अपने सेवक मरदाना के साथ संगीत रूप में प्रस्तुत किया। उस समय मुस्लिम देशों में संगीत को हेय दृष्टि से आँका जाता था और गायक को अपराधी। अन्त में इसका वास्तविक अर्थ जानने पर वहाँ के शासक और वहाँ की जनता ने गुरुदेव का हार्दिक स्वागत और सम्मान किया।

विश्व के हजारों ग्रन्थ, चारों वेद, अठारहों पुराण, जम्बूर, अंजील और कुरान आदि यही एक बात कहते हैं कि एकमात्र परमात्मा सत्यस्वरूप हैं। यहाँ गुरु नानकदेव जी सिद्धों से कहते हैं कि अगर उस परमात्मा का कोई लेखा-जोखा होता तो लिखा जाता, संख्यातीत की कोई संख्या नहीं है, क्योंकि संख्यावाली वस्तुओं का विनाश निश्चित होता है। निष्कर्ष यही है कि वे अकाल-पुरुष ही सबसे बड़े हैं और वे अपनी महिमा स्वयं ही जानने में समर्थ हैं।

सुभाषित–

नानक वड़ा आखीऐ आपे जाणै आपु।

ਤੇਈਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸਾਲਾਹੀ ਸਾਲਾਹਿ ਏਤੀ ਸੁਰਤਿ ਨ ਪਾਈਆ ।।
ਨਦੀਆ ਅਤੈ ਵਾਹ ਪਵਹਿ ਸਮੁੰਦਿ ਨ ਜਾਣੀਅਹਿ ।।
ਸਮੁੰਦ ਸਾਹ ਸੁਲਤਾਨ ਗਿਰਹਾ ਸੇਤੀ ਮਾਲੁ ਧਨੁ ।।
ਕੀੜੀ ਤੁਲਿ ਨ ਹੋਵਨੀ ਜੇ ਤਿਸੁ ਮਨਹੁ ਨ ਵੀਸਰਹਿ ।।੨੩।।

तेईसवीं पउड़ी

सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ ।।
नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि ।।
समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु ।।
कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि ।।२३।।

संगति–

परमात्मा की महिमा का अन्त, अन्तहीन क्यों है?

शब्दार्थ–

ਸਾਲਾਹੀ (सालाही) = स्तुति। ਐਤੀ (ऐती) = इतनी। ਵਾਹ (वाह) = प्रवाह, नाला। ਸਾਹ ਸੁਲਤਾਨ (साह सुलतान) = सम्राट्। ਗਿਰਹ ਸੇਤਿ (गिरह सेति) = पर्वत सदृश। ਕੀੜੀ (कीड़ी) = चींटी। ਹੋਵਨੀ (होवनी) = होना।

भावार्थ–

इस पौड़ी में गुरु नानकदेव जी, सिद्धों की शंका का समाधान करते हुए कहते हैं कि गुणगान करने वाले साधक भी परमात्मा की महिमा का अन्त नहीं पाते, क्योंकि स्तुति-गायक महात्मा प्रभु की प्रभुता का गान तो करते हैं, परन्तु इतना ज्ञान उनके पास भी नहीं होता कि वे कह सकें कि परमात्मा के बस इतने ही गुण हैं। इस कथन को सागर और नदियों के दृष्टान्त से समझाते हुए कहा गया है कि जिस तरह विभिन्न नद, नदी, नाले सागर में पहुँचकर उसमें विलीन हो जाते हैं, किन्तु सागर की अगाध थाह का भान वे नहीं कर पाते, ठीक यही स्थिति विभिन्न साधकों की भी है, वे भी परमात्मा का यशगान करते हैं, उनमें अपनी भाव-भक्ति से लीन-विलीन भी हो जाते हैं, परन्तु भगवान् की असीम महिमा का उन्हें पता नहीं लग पाता।

यहाँ गुरु नानकदेव जी ने एक सशक्त संकेत दिया है कि परमात्मा के पास बड़े, छोटे सब जा सकते हैं, जैसे बड़ी-बड़ी नदियों के साथ छोटे-छोटे नाले भी समुद्र में पहुँचकर उसमें एकाकार होते हैं। सुलतानों के भी सुलतान (पातशाह) की तुलना यहाँ सागर से की गयी है। उसके दरबार में पर्वतों के सदृश धनराशि वाले लोगों की गणना एक तुच्छ चींटी के समान भी नहीं है, अगर उनके हृदय में प्रभु के प्रति अनुराग नहीं है। सच तो यह है कि भगवान् के दरबार में द्रव्य की नहीं, दीन-हीन पुरुष की भावपूर्ण भावना का महत्त्व होता है।

सुभाषित–

समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु।।

ਚੌਵੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਅੰਤੁ ਨ ਸਿਫਤੀ ਕਹਣਿ ਨ ਅੰਤੁ ।।
ਅੰਤੁ ਨ ਕਰਣੈ ਦੇਣਿ ਨ ਅੰਤੁ ।।
ਅੰਤੁ ਨ ਵੇਖਣਿ ਸੁਣਣਿ ਨ ਅੰਤੁ ।।

ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਪੈ ਕਿਆ ਮਨਿ ਮੰਤੁ ।।
ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਪੈ ਕੀਤਾ ਆਕਾਰੁ ।।
ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਪੈ ਪਾਰਾਵਾਰੁ ।।
ਅੰਤੁ ਕਾਰਣਿ ਕੇਤੇ ਬਿਲਲਾਹਿ ।।
ਤਾ ਕੇ ਅੰਤ ਨ ਪਾਏ ਜਾਹਿ ।।
ਏਹੁ ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਣੈ ਕੋਇ ।।
ਬਹੁਤਾ ਕਹੀਐ ਬਹੁਤਾ ਹੋਇ ।।
ਵਡਾ ਸਾਹਿਬੁ ਊਚਾ ਥਾਉ ।।
ਊਚੇ ਉਪਰਿ ਊਚਾ ਨਾਉ ।।
ਏਵਡੁ ਊਚਾ ਹੋਵੈ ਕੋਇ ।।
ਤਿਸੁ ਊਚੇ ਕਉ ਜਾਣੈ ਸੋਇ ।।
ਜੇਵਡੁ ਆਪਿ ਜਾਣੈ ਆਪਿ ਆਪਿ ।।
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਕਰਮੀ ਦਾਤਿ ।।੨੪।।

चौबीसवीं पउड़ी

अंतु न सिफती कहणि न अंतु ।।
अंतु न करणै देणि न अंतु ।।
अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु ।।
अंतु न जापै किआ मनि मंतु ।।
अंतु न जापै कीता आकारु ।।
अंतु न जापै पारावारु ।।
अंतु कारणि केते बिललाहि ।।
ता के अंत न पाए जाहि ।।
एहु अंतु न जाणै कोइ ।।
बहुता कहीऐ बहुता होइ ।।
वडा साहिबु ऊचा थाउ ।।

ऊचे उपरि ऊचा नाउ ।।
एवडु ऊचा होवै कोइ ।।
तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ ।।
जेवडु आपि जाणै आपि आपि ।।
नानक नदरी करमी दाति ।।२४।।

संगति–

परमात्मा अपने स्वरूप को आप ही ज.नता है, ऐसा क्यों कहा है?

शब्दार्थ–

ਸਿਫਤੀ (सिफती) = गुण, विशेषता। ਕਰਣੈ (करणै) = करनी। ਦੇਣੀ (देणी) = देन। ਏਵਡੁ (एवडु) = इनका। ਜੇਵਡੁ (जेवडु) = बड़प्पन। ਨਦਰੀ (नदरी) = प्रभु-कृपा। ਕਰਮੀ (करमी) = जीव का कर्म। ਦਾਤਿ (दाति) = भेंट, फल।

भावार्थ–

परमात्मा कितना महान् है और उसके स्तुति-गायकों की सीमा क्या है? सिद्धों की इस जिज्ञासा का उत्तर सद्‌गुरु जी देते हैं कि न तो उस स्तुत्य (सिफती) ईश्वर का कोई अन्त है और न ही उसके यशगान करने वालों की कोई सीमा है। ईश्वरीय कार्यों की तरह उस प्रभु के दिये पदार्थों की गणना का भी अन्त नहीं है। अकाल-पुरुष का आत्मसाक्षात्कार करने वाले महापुरुष और उनकी कीर्त्ति श्रवण करने वाले गुरुमुख भी अनन्त हैं। भविष्य में प्रभु क्या करने वाले हैं, उनकी इस इच्छा और जो उनका यह सृष्टि प्रसार हो चुका है उसका आर-पार (अन्त) भी मानव की समझ के बाहर है। ईश्वर की महिमा का अन्त जानने के लिए कितने ऋषि, मुनि, ज्ञानी, ध्यानी उसके प्रेम में निरन्तर अश्रुपात करते हैं, वे भी उस अनन्त के अन्त का पता नहीं लगा पाते। आश्चर्य तो यह है कि यह आत्मा उस अंशी परमात्मा का एक अभिन्न अंश है वह भी उसका अन्त नहीं खोज पाता, क्योंकि जितना कहा जाता है उतना ही प्रभु का प्रभाव और प्रसार आगे फैल जाता है। प्रभु सब से ज्येष्ठ, प्रेष्ठ और श्रेष्ठ हैं और उनका गुरुधाम भी सर्वोपरि है, जहाँ पहुँचकर जीव फिर वापस नहीं आता। प्रभु की प्रभुता को प्रकट करने वाले उसके नाम की बड़ाई, ऊँचाई, लम्बाई, चौड़ाई तो वही बता सकता है जो

उनसे बड़ा हो। निष्कर्ष यह है कि परमात्मा से बड़ा कोई नहीं, इसलिए वह स्वयं ही अपने महत्त्व को जान सकता है, कोई दूसरा नहीं। ये अकाल-पुरुष अपनी कृपा (नदरी) से जीव (करमी) को उसके कर्मों के अनुसार फल प्रदान करते हैं। भाव स्पष्ट है कि जीव का कल्याण परमात्मा की नदरी (कृपा-दृष्टि) और उनके अनुग्रह (करमी) पर निर्भर है, जिसके कारण प्राणी सुकर्म करता है और उसका मुक्तिरूपी फल (दाति) प्राप्त करता है।

सुभाषित—

वडा साहिबु ऊचा थाउ।

ਪੰਜੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਬਹੁਤਾ ਕਰਮੁ ਲਿਖਿਆ ਨਾ ਜਾਇ ।।
ਵਡਾ ਦਾਤਾ ਤਿਲੁ ਨ ਤਮਾਇ।।
ਕੇਤੇ ਮੰਗਹਿ ਜੋਧ ਅਪਾਰ ।।
ਕੇਤਿਆ ਗਣਤ ਨਹੀ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਕੇਤੇ ਖਪਿ ਤੁਟਹਿ ਵੇਕਾਰ ।।
ਕੇਤੇ ਲੈ ਲੈ ਮੁਕਰੁ ਪਾਹਿ ।।
ਕੇਤੇ ਮੂਰਖ ਖਾਹੀ ਖਾਹਿ ।।
ਕੇਤਿਆਂ ਦੂਖ ਭੂਖ ਸਦ ਮਾਰ ।।
ਏਹਿ ਭਿ ਦਾਤਿ ਤੇਰੀ ਦਾਤਾਰ ।।
ਬੰਦਿ ਖਲਾਸੀ ਭਾਣੈ ਹੋਇ ।।
ਹੋਰੁ ਆਖਿ ਨ ਸਕੈ ਕੋਇ ।।
ਜੇ ਕੋ ਖਾਇਕੁ ਆਖਣਿ ਪਾਇ ।।
ਓਹੁ ਜਾਣੈ ਜੇਤੀਆ ਮੁਹਿ ਖਾਇ ।।
ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਆਪੇ ਦੇਇ ।।
ਆਖਹਿ ਸਿ ਭਿ ਕੇਈ ਕੇਇ ।।
ਜਿਸ ਨੋ ਬਖਸੇ ਸਿਫਤਿ ਸਾਲਾਹ ।।
ਨਾਨਕ ਪਾਤਿਸਾਹੀ ਪਾਤਿਸਾਹੁ ।।੨੫।।

पच्चीसवीं पउड़ी

बहुता करमु लिखिआ ना जाइ ।।
वडा दाता तिलु न तमाइ ।।
केते मंगहि जोध अपार ।।
केतिआ गणत नही वीचारु ।।
केते खपि तुटहि वेकार ।।
केते लै लै मुकरु पाहि ।।
केते मूरख खाही खाहि ।।
केतिआ दूख भूख सद मार ।।
एहि भि दाति तेरी दातार ।।
बंदि खलासी भाणै होइ ।।
होरु आखि न सकै कोइ ।।
जे को खाइकु आखणि पाइ ।।
ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ ।।
आपे जाणै आपे देइ ।।
आखहि सि भि केई केइ ।।
जिस नो बखसे सिफति सालाह ।।
नानक पातिसाही पातिसाहु ।।२५।।

संगति–

परमात्मा बिना किसी स्वार्थ के सभी को क्यों देता है?

शब्दार्थ–

ਤਮਾਇ (तमाइ) = कामना। ਜੋਧ (जोध) = योद्धा, वीर। ਤੁਟਹਿ (तुटहि) = टूटना। ਖਲਾਸੀ (खलासी) = मुक्ति। ਭਾਣੈ (भाणै) = आज्ञा से। ਖਾਇਕੁ (खाइकु) = मूर्ख, अल्पज्ञ। ਮੁਹਿ ਖਾਇ (मुहि खाइ) = मुह की खाना, पराजित होना।

भावार्थ–

परमात्मा के कार्यों और उनके अनुग्रह की कोई सीमा नहीं है। इस पौड़ी में दाता के दात्य (देन) का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। जिसका मूल्यांकन

करना मानव की शक्ति में नहीं है। मुक्ति, भुक्ति के दाता परमेश्वर हैं जिन्हें ज्ञानी अपने ज्ञान-बल से जानने का प्रयास करते हैं और भक्त अपनी नम्रता से पाने का प्रयास। बिना किसी इच्छा (तमाइ) के सबका पालन-पोषण करने वाले प्रभु के कार्यों का हिसाब कथन और लेख (लिखने) का विषय नहीं है। इस दाता के दरबार में एक ओर जहाँ असंख्य सकामी युद्धवीर अपनी अखण्ड विजय की अभिलाषा की याचना करते हैं, वहीं दूसरी ओर निष्काम भाव से धर्मवीरों की गणना का भी अन्त नहीं, जो हँस-हँस कर धर्म, समाज और दीन-दुःखियों की दर्द को दूर करने के सत्संकल्प की प्रार्थना करते हैं। प्रभु के प्रभाव से विमुख लोग केवल संसार कें भोगों, विकारों की याचना करते हैं और उसी में मर-खप भी जाते हैं। ऐसे कृतघ्न लोग भी बहुत हैं जो परमात्मा की इस सृष्टि से सब कुछ पाने के बाद भी असन्तुष्ट रहते हैं। भगवान् के ऐसे भक्तों की भी कमी नहीं जो माता कुन्ती की तरह भूख तथा दुःखों की याचना करने में ही अपना सौभाग्य मानते हैं। बन्धन और मुक्ति प्रभु की ही देन हैं, ऐसी आस्था रखने वाले वैराग्यवान् आस्तिक जन भी बहुत हैं। वुछ नास्तिक ऐसे भी हैं जो ईश्वर के आदेश-निर्देशों के विपरीत भाव व्यक्त करते हुए अपनी मद (अहंकार) रूपी मनमुखी (आत्मावलम्बी) बातें करते हैं, जिन्हें अन्त में मुह की खानी पड़ती है। यहाँ ऐसे लोग भी कम नहीं हैं जो यह स्वीकार करते हैं कि ईश्वर ने हमारी आवश्यकताओं को स्वयं ही जानकर हमें सब कुछ दिया है। परमात्मा ही उत्पत्तिकर्ता, पालनकर्ता और संहारकर्ता हैं और सब के दातां हैं, इस रहस्य को ठीक से व्यक्त करने और जानने वालों की संख्या भी अधिक नहीं है। अपने स्तुतिगान का वरदान जिन प्रेमी गुरु-भक्तों को उस दाता ने दिया है, उनके विषय में गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि वे भक्तजन बादशाहों के भी बादशाह हैं। यहाँ सदा प्रभु के स्मरण की ओर सागर्भित संकेत का उल्लेख है, जिसमें अहंकार और स्वार्थ का लेशमात्र भी नहीं होता।

सुभाषित–

वडा दाता तिलु न तमाइ।

ਛੱਬੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਅਮੁਲ ਗੁਣ ਅਮੁਲ ਵਾਪਾਰ ।।
ਅਮੁਲ ਵਾਪਾਰੀਏ ਅਮੁਲ ਭੰਡਾਰ ।।

ਅਮੁਲ ਆਵਹਿ ਅਮੁਲ ਲੈ ਜਾਹਿ ।।
ਅਮੁਲ ਭਾਇ ਅਮੁਲਾ ਸਮਾਹਿ ।।
ਅਮੁਲ ਧਰਮੁ ਅਮੁਲੁ ਦੀਬਾਣੁ ।।
ਅਮੁਲ ਤੁਲੁ ਅਮੁਲੁ ਪਰਵਾਣੁ ।।
ਅਮੁਲੁ ਬਖਸੀਸ ਅਮੁਲੁ ਨੀਸਾਣੁ ।।
ਅਮੁਲੁ ਕਰਮੁ ਅਮੁਲੁ ਫੁਰਮਾਣੁ ।।
ਅਮੁਲੋ ਅਮੁਲੁ ਆਖਿਆ ਨ ਜਾਇ ।।
ਆਖਿ ਆਖਿ ਰਹੇ ਲਿਵ ਲਾਇ ।।
ਆਖਹਿ ਵੇਦ ਪਾਠ ਪੁਰਾਣ ।।
ਆਖਹਿ ਪੜੇ ਕਰਹਿ ਵਖਿਆਣ ।।
ਆਖਹਿ ਬਰਮੇ ਆਖਹਿ ਇੰਦ ।।
ਆਖਹਿ ਗੋਪੀ ਤੈ ਗੋਵਿੰਦ ।।
ਆਖਹਿ ਈਸਰ ਆਖਹਿ ਸਿਧ ।।
ਆਖਹਿ ਦਾਨਵ ਆਖਹਿ ਦੇਵ ।।
ਆਖਹਿ ਸੁਰਿ ਨਰ ਮੁਨਿ ਜਨ ਸੇਵ ।।
ਕੇਤੇ ਆਖਹਿ ਆਖਣਿ ਪਾਹਿ ।।
ਕੇਤੇ ਕਹਿ ਕਹਿ ਉਠਿ ਉਠਿ ਜਾਹਿ ।।
ਏਤੇ ਕੀਤੇ ਹੋਰਿ ਕਰੇਹਿ ।।
ਤਾ ਆਖਿ ਨ ਸਕਹਿ ਕੇਈ ਕੇਇ ।।
ਜੇਵਡੁ ਭਾਵੈ ਤੇਵਡੁ ਹੋਇ ।।
ਨਾਨਕ ਜਾਣੈ ਸਾਚਾ ਸੋਇ ।।
ਜੇ ਕੋ ਆਖੈ ਬੋਲੁਵਿਗਾੜੁ ।।
ਤਾ ਲਿਖੀਐ ਸਿਰਿ ਗਾਵਾਰਾ ਗਾਵਾਰੁ ।।੨੬।।

छब्बीसवीं पउड़ी

अमुल गुण अमुल वापार ।।
अमुल वापारीए अमुल भंडार ।।

अमुल आवहि अमुल लै जाहि ।।
अमुल भाइ अमुला समाहि ।।
अमुलु धरमु अमुलु दीबाणु ।।
अमुलु तुलु अमुलु परवाणु ।।
अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु ।।
अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु ।।
अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ ।।
आखि आखि रहे लिव लाइ ।।
आखहि वेद पाठ पुराण ।।
आखहि पड़े करहि वखिआण ।।
आखहि बरमे आखहि इंद ।।
आखहि गोपी तै गोविंद ।।
आखहि ईसर आखहि सिध ।।
आखहि केते कीते बुध ।।
आखहि दानव आखहि देव ।।
आखहि सुरि नर मुनि जन सेव ।।
केते आखहि आखणि पाहि ।।
केते कहि कहि उठि उठि जाहि ।।
एते कीते होरि करेहि ।।
ता आखि न सकहि केई केइ ।।
जेवडु भावै तेवडु होइ ।।
नानक जाणै साचा सोइ ।।
जे को आखै बोलुविगाडु ।।
ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु ।।२६।।

संगति–

परमेश्वर के गुणगान को अमूल्य क्यों कहा गया है?

शब्दार्थ–

ਅਮੁਲ (अमुल) = अनमोल। ਵਾਪਾਰ (वापार) = व्यापार। ਵਾਪਾਰੀਏ (वापारीए) = व्यापारी, मोक्षार्थी। ਤੁਲ (तुल) = तराजू। ਵਰਵਾਣ (वरवाण) = वटा। ਲਿਵਲਾਇ (लिवलाइ) = मौन। ਬੋਲ ਵਿਗਾੜ (बोल विगाड) = बकवासी, व्यर्थ बोलने वाला। ਗੰਵਾਰੁ (गंवारु) = गँवार।

भावार्थ–

इस पौड़ी में गुरु नानकदेव जी ने सिद्धों की जिज्ञासा (१. सच्चे साधक, सन्तों के गुण, २. उनका व्यापार-व्यवहार, ३. उनके परमेश्वर, ४. प्रभु के अन्य जिज्ञासु—गायकों) का समुचित उत्तर दिया है। परमात्मा के महत्त्व का प्रतिपादन करने वाले महात्माओं के ज्ञान, सत्य, सन्तोष आदि गुण हैं, जिनका मूल्यांकन करना कठिन है, क्योंकि सर्वसाधारण जन में ये गुण नहीं होते। इन सन्तों का प्रभु स्मरण करना और दूसरे लोगों से भी कीर्त्ति (कीर्त्तन) कराना, आत्मसाक्षात्कार आदि निधि की विधि का ज्ञान देना, अमोल उपदेश-श्रद्धा आदि का पाठ पढ़ाना, प्रभु के नाम में लवलीन रहना एवं लवलीन कराना, धृति-क्षमा आदि धर्मों का पालन करना, सत्संगरूपी दीवान लगाना, परमात्मा के प्रति सच्चा होना, परमात्मा का कृपापात्र बनना, नाम-कथन और उसका सर्वत्र उपदेश करना आदि ऐसे अमूल्य व्यापार हैं, जिनसे इन प्रभु आश्रित महात्माओं को बड़ी सरलता से जाना जाता है।

उपर्युक्त महात्माओं के गुण और व्यवहार के माध्यम से ईश्वर के ही गुणों का गान किया गया है कि ईश्वर का गुण, व्यवहार (व्यापार), दया भण्डार, धर्म, दरबार, गुण-अवगुण जानने का तराजू, कृपादृष्टि, मुक्ति-निशान, कर्ण उदारता, फुरमाणु (आदेश-हुक्म) सभी अमूल्य हैं, जिनकी तुलना दूसरे किसी के साथ नहीं की जा सकती; क्योंकि इनका स्रष्टा-द्रष्टा अतुलनीय और अकथनीय है। अत: ऐसे अमूल्य (अमोल) और निर्मल से निर्मल निरंजन का वर्णन नहीं हो सकता; क्योंकि वर्णन करने वाले बड़े से बड़े ऋषि-तपी भी उसके प्रभाव का वर्णन करते-करते उसी में विलीन हो गये हैं, जो वेद, पुराणों के पाठक और उपदेशक व्याख्याता भी रहे हैं। ब्रह्मा, इन्द्र, गोपी (स्त्री), गोविन्द (पुरुष), शिव, सिद्ध, विद्वान्, दैत्य, देव, नर, मुनि आदि सभी परमात्मा के गुणों के जिज्ञासु और गायक हैं। इससे पता चलता है कि ईश्वर का गुणगान केवल महात्मा ही नहीं करते, अपितु उपर्युक्त (वैदिकलोग) पौराणिक, गोपी-गोविन्द (भगवान् धर्मावलम्बी),

ईसर (शैवमतावलम्बी), सिध (नाथ सम्प्रादय वाले), बुध (बौद्ध धर्म वाले) एवं जन (जैन धर्म) के लोगों की ओर यहाँ स्पष्ट संकेत है कि ये सब लोग अपनी-अपनी विधि से अकाल-पुरुष की प्रशंसा करते ही हैं, जिसके प्रबल पक्षधर आदिगुरु नानकदेव जी हैं।

अनेक लोग (वर्तमानकाल में भी) अपने विग्रह और अनुग्रह के लिए भगवान् की स्तुति करते हैं, कर रहे हैं और जो यशगान में असमर्थ हैं वे भी अपनी भावना को मूर्त्तरूप देने के प्रयास में लगे हैं। भूतकाल में उनके स्तुतिगायक स्तवन करके प्रभु के दरबार में उपस्थित हो चुके हैं। भविष्य में भी यह क्रम जारी रहेगा औ: सत्यसंकल्पी लोग सच्चे-सुच्चे स्थान को पाने के लिए सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, सबल, सक्षम के साक्षात्कार में लगे रहेंगे। इस प्रभु के कीर्त्ति पथ की न तो सीमा है और न ही इतिश्री, क्योंकि इस पथ के प्रदर्शक स्वयं प्रभु हैं, वे जहाँ तक इस प्रशंसा-पथ का प्रसार करना चाहें, कर सकते हैं। अगर कोई व्यक्ति अहंकारवश यह घोषणा करने का दुःसाहस करता है कि वह ईश्वर के भक्तों की भक्ति, भगवान् के वैभव की शक्ति और जिज्ञासु की अनुरक्ति का अन्त जानता है तो इस सम्बन्ध में गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि जो ऐसा कहता है मूर्ख (जड़) है और उसकी यह गर्वोक्ति चण्डूखाने की गप्प मात्र ही है।

सुभाषित–

जे को आखै बोलुविगाड़ु। ता लिषीऐ सिरि गावारा गावारु।।

ਸਤਾਈਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਸੋ ਦਰੁ ਕੇਹਾ ਸੋ ਘਰੁ ਕੇਹਾ ਜਿਤੁ ਬਹਿ ਸਰਬ ਸਮਾਲੇ ।।
ਵਾਜੇ ਨਾਦ ਅਨੇਕ ਅਸੰਖ਼ਾ ਕੇਤੇ ਵਾਵਣਹਾਰੇ ।।
ਕੇਤੇ ਰਾਗ ਪਰੀ ਸਿਉ ਕਹੀਅਨਿ ਕੇਤੇ ਵਾਵਣਹਾਰੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਤੁਹਨੋ ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੁ ਗਾਵੈ ਰਾਜਾ ਧਰਮੁ ਦੁਆਰੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਚਿਤੁ ਗੁਪਤੁ ਲਿਖਿ ਜਾਣਹਿ ਲਿਖਿ ਲਿਖਿ ਧਰਮੁ ਵੀਚਰੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਈਸਰੁ ਬਰਮਾ ਦੇਵੀ ਸੋਹਨਿ ਸਦਾ ਸਵਾਰੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਇੰਦ ਇਦਾਸਣਿ ਬੈਠੇ ਦੇਵਤਿਆ ਦਰਿ ਨਾਲੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਸਿਧ ਸਮਾਧੀ ਅੰਦਰਿ ਗਾਵਨਿ ਸਾਧ ਵਿਚਾਰੇ ।।

ਗਾਵਨਿ ਜਤੀ ਸਤੀ ਸੰਤੋਖੀ ਗਾਵਹਿ ਵੀਰ ਕਰਾਰੇ ।।
ਗਾਵਨਿ ਪੰਡਿਤ ਪੜਨਿ ਰਖੀਸਰ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਵੇਦਾ ਨਾਲੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਮੋਹਣੀਆ ਮਨੁ ਮੋਹਨਿ ਸੁਰਗਾ ਮਛ ਪਇਆਲੇ ।।
ਗਾਵਨਿ ਰਤਨ ਉਪਾਏ ਤੇਰੇ ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਨਾਲੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਜੋਧ ਮਹਾਬਲ ਸੂਰਾ ਗਾਵਹਿ ਖਾਣੀ ਚਾਰੇ ।।
ਗਾਵਹਿ ਖੰਡ ਮੰਡਲ ਵਰਭੰਡਾ ਕਰਿ ਕਰਿ ਰਖੇ ਧਾਰੇ ।।
ਸੇਈ ਤੁਧੁਨੋ ਗਾਵਹਿ ਜੋ ਤੁਧੁ ਭਾਵਨਿ ਰਤੇ ਤੇਰੇ ਭਗਤ ਰਸਾਲੇ ।।
ਹੋਰਿ ਕੇਤੇ ਗਾਵਨਿ ਸੇ ਮੈ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵਨਿ ਨਾਨਕੁ ਕਿਆ ਵੀਚਾਰੇ।।
ਸੋਈ ਸੋਈ ਸਦਾ ਸਚੁ ਸਾਹਿਬੁ ਸਾਚਾ ਸਾਚੀਂ ਨਾਈ ।।
ਹੈ ਭੀ ਹੋਸੀ ਜਾਈ ਨ ਜਾਸੀ ਰਚਨਾ ਜਿਨਿ ਰਚਾਈ ।।
ਰੰਗੀ ਰੰਗੀ ਭਾਤੀ ਕਰਿ ਕਰਿ ਜਿਨਸੀ ਮਾਇਆ ਜਿਨਿ ਉਪਾਈ ।।
ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਕੀਤਾ ਆਪਣਾ ਜਿਵ ਤਿਸ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ।।
ਜੋ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਸੋਈ ਕਰਸੀ ਹੁਕਮੁ ਨ ਕਰਣਾ ਜਾਈ ।।
ਸੋ ਪਾਤਿਸਾਹੁ ਸਾਹਾ ਪਾਤਿਸਾਹਿਬੁ ਨਾਨਕ ਰਹਣੁ ਰਜਾਈ ।।੨੭।।

सत्ताईसवीं पउड़ी

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ।।
वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे ।।
केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे ।।
गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ।।
गावहि चितु गुपतु लिखि जाणहि लिखि लिखि धरमु वीचारे ।।
गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे ।।
गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ।।
गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे ।।
गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे ।।
गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगु जुगु वेदा नाले ।।

गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले ।।
गावनि रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ।।
गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे ।।
गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे ।।
सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ।।
होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे ।।
सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ।।
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ।।
रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ।।
करि करि देखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई ।।
जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई ।।
सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई ।।२७।।

संगति–

परमात्मा के घर को सच्चखण्ड क्यों कहा गया है?

शब्दार्थ–

ਕੇਹਾ (केहा) = कैसा। ਨਾਦ (नाद) = शब्द। ਦਰ (दर) = दरवाजा। ਵਾਵਣ ਹਾਰੇ (वावण हारे) = बजाने वाले। ਤੁਹਨੋ (तुहनो) = आपका। ਪਉਣੁ (पउणु) = वायु। ਬੈਸੰਤਰੁ (बैसंतरु) = अग्नि। ਚਿਤੁ ਗੁਪਤੁ (चितु गुपतु) = चित्रगुप्त। ਕਰਾਰੇ (करारे) = हठीले। ਰਖੀਸਰ (रखीसर) = ऋषि। ਸੁਰਮਾ (सुरमा) = स्वर्ग। ਮਛ (मछ) = मृत्युलोक। ਪਇਆਲੇ (पइआले) = पाताल। ਖਾਣੀ ਚਾਰੇ (खाणी चारे) = चार प्रकार की उत्पत्तियाँ, योनियाँ। ਵਰਭੰਡਾ (वरभंडा) = ब्रह्माण्ड। ਤੁਧੁਨੋ (तुधुनो) = आपको। ਭਗਤ ਰਸਾਲੇ (भगत रसाले) = रसिक भक्त। ਭਾਤੀ (भाती) = अनेक प्रकार। ਜਿਨਸੀ (जिनसी) = सृष्टि। ਕਰਣ (करण) = बन्धन।

भावार्थ–

अकाल-पुरुष परमात्मा के दर और घर क़े सम्बन्ध में जिज्ञासा करने पर सिद्धों को सद्गुरु जी कहते हैं—सच तो यह है कि जिस दर (द्वार) और घर में बैठकर परमात्मा सम्पूर्ण संसार का संचालन कर रहे हैं उसके सम्बन्ध में

कुछ कहना कपोल-कल्पित कल्पना ही होगी। सिद्धों को उत्तर देने के साथ गुरु नानकदेव जी इस विषय में अकाल-पुरुष से विनती भी करते हैं। भगवान् अपने स्व-स्वरूपरूपी घर के सत्संगरूपी दरवाजे में बैठकर संसार की गतिविधि का अवलोकन करते हैं, अर्थात् सच्चखण्ड (गुरुधाम) रूपी घर के संसाररूपी दर में स्थित होकर सब जीवों की सँभाल कर रहे हैं। इस संसाररूपी दरवाजे पर असंख्य नाद (बाजों) की ध्वनियाँ हो रही हैं। अनगिनत बजाने वाले भी विभिन्न प्रकार के रागों और रागिनियों से अकाल-पुरुष की यशगाथा गा रहे हैं। वाहिगुरु जी आपकी स्तुति वायुदेवता, जलदेवता और अग्निदेवता भी करते हैं। धर्मराज और जीवों के कार्यों को गुप्त रूप से लिखने तथा समय पर प्रभु के सम्मुख रखने वाले चित्रगुप्त भी आपका ही स्तवन करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, भगवती माँ आपकी प्रदत्त शोभा से ही सुशोभित होकर आपका गुणगान करते हैं। इन्द्रासन पर विराजमान देवराज भी अपनी देव मण्डली के साथ और समाधिस्थ सिद्ध-साधु, यति, सति (सत्यवादी), सन्तोषी, अपराजित शूरवीर भी आपके महिमा-मण्डित महत्त्व को गाते हैं।

अध्ययनशील बड़े-बड़े विचारक मनीषी, महर्षि भी वेद-वेदाङ्गों के माध्यम से आपको ही प्रतिपादित करते हैं। मन को आकृष्ट करने वाली स्त्रियाँ स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल भी आपकी कीर्त्ति का गान करते हैं। १४ रत्न और ६८ तीर्थ भी आपकी ही महिमा बताते हैं। यहाँ चौदह रत्न, श्रेष्ठ वृत्तियों के और अड़सठ तीर्थ, मुख्य तीर्थों या गुरुवाणी के श्रेष्ठ ६८ पदों के द्योतक हैं। बड़े-बड़े धर्मवीर, कर्मवीर, दानवीर, युद्धवीर भी आपकी स्तुति करते हैं। चार प्रकार की योनियों में उत्पन्न जीव आपका ही यश गाते हैं। नौ खण्डों, सात द्वीपों, ब्रह्माण्डों में रहने वाले सभी लोग आपका गान करते हैं। आपके द्वारा बनाये गये आपके रसिक, प्रेमी भक्त आपकी गाथा गाते हैं। गुरु नानकदेव जी कहते हैं, कहाँ तक वर्णन और गणना की जाये। भूतकाल, वर्तमानकाल में सत्यस्वरूप सच्चिदानन्द अपनी सम्पूर्ण इस सृष्टि रचना का संरक्षण करते आ रहे हैं और भविष्य में भी इसका पोषण करते रहेंगे। उस परम सत्ताधारी के कार्यों में हस्तक्षेप करने का सामर्थ्य किसी में नहीं, क्योंकि वे राजाधिराज हैं और उनका आदेश अपरिवर्त्तनीय और सर्वमान्य है।

सुभाषित–

सेई तुधनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले।



प्रचारणम्

(उपदेश)

ਅਠਾਈਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਮੁੰਦਾ ਸੰਤੋਖੁ ਸਰਮੁ ਪਤੁ ਝੋਲੀ ਧਿਆਨ ਕੀ ਕਰਹਿ ਬਿਭੂਤਿ ।।
ਖਿੰਥਾ ਕਾਲੁ ਕੁਆਰੀ ਕਾਇਆ ਜੁਗਤਿ ਡੰਡਾ ਪਰਤੀਤਿ ।।
ਆਈ ਪੰਥੀ ਸਗਲ ਜਮਾਤੀ ਮਨਿ ਜੀਤੈ ਜਗੁ ਜੀਤੁ ।।
ਆਦੇਸੁ ਤਿਸੈ ਆਦੇਸੁ ।।
ਆਦਿ ਅਨੀਲੁ ਅਨਾਦਿ ਅਨਾਹਤਿ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਏਕੋ ਵੇਸੁ ।।੨੮।।

अठाईसवीं पउड़ी

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ।।
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ।।
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ।।
आदेसु तिसै आदेसु ।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ।।२८।।

संगति–

सच्चे योग और वेश की कसौटी किसे कहा गया है?

शब्दार्थ–

ਮੁੰਦਾ (मुंदा) = मुद्रा, नाथ लोग कान में पहनते हैं, बाली। ਸਰਮੁ (सरमु) = श्रम, लज्जा। ਪਤੁ (पतु) = प्रतिष्ठा। ਖਿੰਥਾ (खिंथा) = गुदड़ी। ਕੁਆਰੀ (कूआरी) = शुद्ध। ਕਾਇਆ (काइआ) = काया। ਆਈ ਪੰਥੀ (आई पंथी) = सन्मार्गी।

भावार्थ–

सिद्धों, नाथों को योगशास्त्र की अनेक पद्धतियों से दीक्षित करने के लिये उनके आचार्य उन्हें विभिन्न प्रकार की शारीरिक मुद्राएँ (कर्णाभूषण, बाली) धारण कराते हैं। सद्गुरु नानकदेव जी ऐसे लोगों को बाह्य नहीं, आन्तरिक अलंकरणों का महत्त्व बताते हुए कहते हैं कि सन्तोषरूपी मुद्रा हमारा कर्णाभूषण हो और कुकर्मों से विरत रहना ही हमारी सत्काररूपी झोली होनी चाहिये, क्योंकि प्रभु का ध्यान ही हमारी भस्म, ब्रह्मचर्य्य पालन ही हमारी खिंथा (कंथा-गुदड़ी) है, वाहिगुरु के चरणों में हठ विश्वास देखना ही हमारा डंडा है। मानव मात्र से प्रेम करना ही हमारा 'आईपन्थ' (सन्मार्ग) है, अर्थात् जो गुरु की शरण में आया वह हमारा हो गया। मन को जीतना अर्थात् उसे अपने वश में रखना ही हमारी विश्व-विजय है।

यहाँ गुरु नानकदेव जी ने एक रूपक के द्वारा योगियों के बाह्य साधनों की तुलना अपने आन्तरिक उपकरणों से करते हुए साधना के सच्चे स्वरूप का चित्रण किया है। मन, वाणी और शरीर से अकाल-पुरुष को प्रणाम कीजिए, जो आदि, वर्णरहित, रूपरहित, अखण्ड, असंख्य और सदा एक-सा है। कठोपनिषद् (२।१।१३) में भी 'ईशानो भूतभव्यस्य स एवाद्य सउ श्वः। एतद्वैतत्' कहकर अकाल-पुरुष की एकरूपता का ही प्रतिपादन किया गया है।

सुभाषित–

आई पन्थी सगल जमाती, मनि जीतै जगु जीतु।

ਉਨੱਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਭੁਗਤਿ ਗਿਆਨੁ ਦਇਆ ਭੰਡਾਰਣਿ ਘਟਿ ਘਟਿ ਵਾਜਹਿ ਨਾਦ ।।
ਆਪਿ ਨਾਥੁ ਨਾਥੀ ਸਭ ਜਾ ਕੀ ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਅਵਰਾ ਸਾਦ ।।
ਸੰਜੋਗੁ ਵਿਜੋਗੁ ਦੁਇ ਕਾਰ ਚਲਾਵਹਿ ਲੇਖੇ ਆਵਹਿ ਭਾਗ ।।
ਆਦੇਸੁ ਤਿਸੈ ਆਦੇਸੁ ।।
ਆਦਿ ਅਨੀਲੁ ਅਨਾਦਿ ਅਨਾਹਤਿ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਏਕੋ ਵੇਸੁ ।।੨੯।।

उन्तीसवीं पउड़ी

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजहि नाद ।।
आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद ।।
संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग ।।
आदेसु तिसै आदेसु ।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ।।२९।।

संगति–

ब्रह्मज्ञानी का भोजन ज्ञान क्यों है?

शब्दार्थ–

ਭੁਗਤਿ (भुगति) = योग, भोजन। ਸਾਦ (साद) = स्वाद। ਅਵਰਾ (अवरा) = दूसरा। ਭਾਗ (भाग) = भाग्य, नसीब।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी कहते हैं—सिद्धों! ज्ञान ही हमारा भोज्य पदार्थ है, जिसका निर्माण दयारूपी भण्डारिन करती है। इस ज्ञान-भण्डारे में निरन्तर प्रत्येक घट (शरीर) में नाद (संगीत) चल रहा है। आप जिस बाहरी भोजन को भोजन, बाहरी भण्डारे को भण्डारा तथा बाहरी बाजे की आवाज को नाद कहते हैं उससे भिन्न हमारा ज्ञानरूपी भोजन, दयापूरित भण्डारा और अन्तर्मन नाद है, जो स्थायी और अनश्वर है। जिन्हें आप (सिद्ध) नाथ कहते हैं वे तो स्वयं ही, हमारे अनाथों के नाथ अक़ाल-पुरुष द्वारा नत्थे हुए हैं। जीवमात्र को अपने प्रभाव से नाथने वाला ही सच्चा नाथ हो सकता है, कोई कालाधीन, मरणशील व्यक्ति कभी नहीं। बाहरी ऋद्धि-सिद्धि से प्राप्त रसानन्द हमारी दृष्टि से तुच्छ और हीन है, क्योंकि हमें तो सच्चिदानन्द-घन का स्वाद प्राप्त है। सृष्टि में जीवों का संयोग और वियोग भी ईश्वराधीन है। हमारे शुभ कर्म जो सांसारिक पदार्थों से हमारा संयोग कराते हैं वे ही कुठारी हैं और हमारे मन्द कर्म जो उनसे वियोग कराते हैं वे ही भण्डारी हैं। संयोग-वियोग द्वारा जो प्राप्त होता है वही हमारा प्रारब्ध (भाग्य) है। इस प्रारब्ध के प्रणेता परमेश्वर ही प्रणाम (आदेश) करने योग्य हैं, जिनका रूप, रस, रंग सदा समान ही रहता है।

सुभाषित–

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि, घटि घटि नु वाजहि नाद।

यहाँ घट शब्द शरीर के लिए आया है। 'घटते इति घटः' अर्थात् जो नित्य प्रतिदिन घट रहा है, कम हो रहा है।

ਤੀਹਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਏਕਾ ਮਾਈ ਜੁਗਤਿ ਵਿਆਈ ਤਿਨਿ ਚੇਲੇ ਪਰਵਾਣੁ ।।
ਇਕੁ ਸੰਸਾਰੀ ਇਕੁ ਭੰਡਾਰੀ ਇਕੁ ਲਾਏ ਦੀਬਾਣੁ ।।
ਜਿਵ ਤਿਸੁ ਭਾਵੈ ਤਿਵੈ ਚਲਾਵੈ ਜਿਵ ਹੋਵੈ ਫੁਰਮਾਣੁ ।।
ਓਹੁ ਵੇਖੈ ਓਨਾ ਨਦਰਿ ਨ ਆਵੈ ਬਹੁਤਾ ਏਹੁ ਵਿਡਾਣੁ ।।
ਆਦੇਸੁ ਤਿਸੈ ਆਦੇਸੁ ।।
ਆਦਿ ਅਨੀਲੁ ਅਨਾਦਿ ਅਨਾਹਤਿ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਏਕੋ ਵੇਸੁ ।।੩੦।।

तीसहवीं पउड़ी

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणुं ।।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ।।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ।।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु ।।
आदेसु तिसै आदेसु ।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु एको वेसु ।।३०।।

संगति–

मायापति की माया से सृष्टि की उत्पत्ति कैसे होती है?

शब्दार्थ–

ਮਾਈ (माई) = माता। ਜੁਗਤਿ (जुगति) = युक्ति। ਵਿਆਈ (विआई) = जन्म देना। ਤਿਨਿ (तिनि) = तीन। ਪਰਵਾਣੁ (परवाणु) = प्रामाणिक। ਸੰਸਾਰੀ (संसारी) = ब्रह्मा। ਭੰਡਾਰੀ (भंडारी) = विष्णु। ਲਾਏਦੀਵਾਣੁ (लाए दीवाणु) = शिव। ਫੁਰਮਾਣੁ (फुरमाणु) = आज्ञा। ਨਦਰਿ (नदरि) = दृष्टि, नजर। ਵਿਡਾਣੁ (विडाणु) = आश्चर्य।

भावार्थ–

सृष्टि की उत्पत्ति और उसकी गतिविधि पर प्रकाश डालते हुए सद्‌गुरु जी कहते हैं—'माया ने अखण्ड, परमानन्द, परमात्मा के सम्पर्क में आकर तीन पक्के चेले या प्रामाणिक पुत्रों की सृष्टि की। कार्य विभाजन की दृष्टि से एक (ब्रह्मा) को संसार का सर्जन करने का, दूसरे (विष्णु) को पालन, पोषण, रक्षण का तथा तीसरे (रुद्र, शंकर) को प्रलय (संहार) का कार्य सौंपा। ये कर्ता-धर्ता-हर्ता भी अपने कार्यों में पूर्ण स्वतन्त्र हैं; क्योंकि प्रभु अपने प्रभाव से इन्हें जो निर्देश देते हैं वही कार्य ये तीनों करते हैं। सबसे बड़ा आश्चर्य तो यह है कि अकाल-पुरुष तो इन तीनों की गतिविधि को अच्छी तरह देखते हैं, परन्तु ये ब्रह्मा, विष्णु, महेश उस प्रभु के संकल्पित कार्यों को नहीं देख पाते। ऐसे शक्तिशाली सद्‌गुरु ही प्रणम्य हैं, क्योंकि उनका युग-युगान्तरों तक चलने वाला वेश, व्यवहार, आचार अपरिवर्त्तनीय है।

सुभाषित–

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।

यहाँ माई शब्द माया के लिए आया। माया का अर्थ है 'या' (जो), 'मा' (नहीं) है उसे माया कहते हैं, अर्थात् जो सदा रहने वाली नहीं, केवल दिखावा मात्र है।

ਇਕੱਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਆਸਣੁ ਲੋਇ ਲੋਇ ਭੰਡਾਰ ।।
ਜੋ ਕਿਛੁ ਪਾਇਆ ਸੁ ਏਕਾ ਵਾਰ ।।
ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਸਿਰਜਣਹਾਰੁ ।।
ਨਾਨਕ ਸਚੇ ਕੀ ਸਾਚੀ ਕਾਰ।।
ਆਦੇਸੁ ਤਿਸੈ ਆਦੇਸੁ ।।
ਆਦਿ ਅਨੀਲੁ ਅਨਾਦਿ ਅਨਾਹਤਿ ਜੁਗੁ ਜੁਗੁ ਏਕੋ ਵੇਸੁ ।।੩੧।।

इकतीसवीं पउड़ी

आसणु लोइ लोइ भंडार ।।
जो किछु पाइआ सु एका वार ।।

करि करि वेखै सिरजणहारु ।।
नानक सचे की साची कार ।।
आदेसु तिसै आदेसु ।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ।।३१।।

संगति–

सच्चा 'आसन' और भण्डार किसे कहा गया है?

शब्दार्थ–

ਆਸੁਣ (आसुण) = आसन। ਲੋਇ ਲੋਇ (लोइ लोइ) = प्रत्येक लोक। ਭੰਡਾਰ (भंडार) = खजाना। ਵੇਖੈ (देखै) = देखना। ਸਿਰਜਣ ਹਾਰ (सिरजण हार) = निर्माता।

भावार्थ–

सिद्धों की आस्था आसन और भण्डारे (सार्वजनिक भोज) में होती है। गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि सद्गुरु का आसन तो श्रद्धापूरित श्रद्धालुओं का श्रद्धा-केन्द्र हृदय ही है, अतः हमें किसी बाहरी आसन के अभ्यास की आवश्यकता नहीं है। भण्डारा (लंगर) का तात्पर्य ऐसे भोजन से है जिसे लोग अपनी आस्था से स्वेच्छया लाकर प्रभु को निमित्त मानकर बिना किसी भेदभाव के गुरुमुखों को खुले दिल से खिलाते (छकाते) हैं। गुरुओं द्वारा एक बार ही दिया गया पदार्थ हमारे लिये पर्याप्त होता है, फिर हमें किसी अन्य वस्तु या पदार्थ की अभिलाषा नहीं रहती है। सृष्टि-कर्त्ता प्रभु अपने प्रभाव से सृष्टि का सर्जन (निर्माण) भी करता है और उसकी देखभाल भी। सच्चे पातशाह की तरह उसका रचना संसार भी सत्य है। यहाँ श्रीवल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत मत के समर्थन का संकेत भी उपलब्ध है; क्योंकि वल्लभ सम्प्रदाय जगत् को मिथ्या नहीं, अपितु उसके निर्माता भगवान् की तरह उसे सत्य ही मानता है। भगवान् शङ्कराचार्य ने भी संसार में आसक्त पुरुषों के लिये ही जगत् को मिथ्या कहा है, ब्रह्मज्ञानियों के लिए तो 'सत्यं जगदिति' ही कहा है। ऐसे जगन्नियन्ता को सदा प्रणाम, जो एकरस और एकरूप ही रहते हैं।

सुभाषित–

नानक सचे की साची कार।

यहाँ 'कार' शब्द जगत् की रचना (उत्पत्ति) के लिये प्रयुक्त हुआ है, जिसका भावार्थ है— सच्चे परमात्मा की रचना (संसार) भी सत्य है।

ਬੱਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਇਕ ਦੂ ਜੀਭੌ ਲਖ ਹੋਹਿ ਲਖ ਹੋਵਹਿ ਲਖ ਵੀਸ ।।
ਲਖੁ ਲਖੁ ਗੇੜਾ ਆਖੀਅਹਿ ਏਕੁ ਨਾਮੁ ਜਗਦੀਸ ।।
ਏਤੁ ਰਾਹਿ ਪਤਿ ਪਵੜੀਆ ਚੜੀਐ ਹੋਇ ਇਕੀਸ ।।
ਸੁਣਿ ਗਲਾ ਆਕਾਸ ਕੀ ਕੀਟਾ ਆਈ ਰੀਸ ।।
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਪਾਈਐ ਕੂੜੀ ਕੂੜੈ ਠੀਸ ।।੩੨।।

बत्तीसवीं पउड़ी

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ।।
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ।।
एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ ह़ोइ इकीस ।।
सुणि गला आकास की कीटा आई रीस ।।
नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस ।।३२।।

संगति–

परमात्मा की प्राप्ति की पौड़ियों का रास्ता क्या है?

शब्दार्थ

ਗੇੜਾ (गेड़ा) = फेरा, बार-बार आना। ਏਤੁ (एतु) = इस। ਪਵੜੀਆ (पवड़ीआ) = पौड़ी। ਇਕੀਸ (इकीस) = ऐक्य। ਗਲਾ (गला) = बात। ਆਕਾਸ (आकास) = ब्रह्म, आकाश। ਕੂੜੀ ਕੂੜੈ (कूड़ी कूड़ै) = बाहरी आडम्बर। ਠੀਸ (ठीस) = व्यर्थ, बकवास।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी इस पौड़ी में प्रभु की अनवरत चलने वाली प्रीति और उनकी कृपादृष्टि के महत्त्व को समझाते हुए साधक सिद्धों से कहते हैं कि एक जीभ से लाख जीभ हो जायें, चाहे लाख से बीस लाख किन्तु, प्रभु के स्मरण

में रुकावट नहीं आ सकती; क्योंकि प्रभु-प्रेमी की प्रीति पराकाष्ठा अपने चरम लक्ष्य पर पहुँच चुकी है, अजपा-जाप के अभ्यास और जगदीश के नाम के प्रभाव से। इस गौरव ग्रन्थ 'जपुजी' में पहली बार इस पौड़ी में 'पौड़ी' शब्द आया है जिस पर चढ़कर और चलकर ही जीव, परमात्मा को पाकर उनमें एकाकार हो सकता है। गुरु नानकदेव जी की स्पष्ट अवधारणा है कि उस परब्रह्म (अकाल) की महिमा का विस्तृत वर्णन सुनकर सर्वसाधारण जीवों में भी उसे पाने की होड़ लग सकती है; परन्तु सत्य तो यह है कि बिना उस दाता, दयानिधान की दया के किसी को उसके दरबार का दर्शन नहीं हो सकता। यदि ईश्वर तथा उसकी कृपा के बिना कोई मत-मतावलम्बी किसी दूसरे साधन को मानता है, तो वह साधन निरर्थक और गप्प मात्र ही होगा।

सुभाषित–

लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस।

'गेड़ा' शब्द यहाँ चौरासी योनियों में भ्रमण के लिए प्रयुक्त है।

ਤੇਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਆਖਣਿ ਜੋਰੁ ਚੁਪੈ ਨਹ ਜੋਰੁ ।।
ਜੋਰੁ ਨ ਮੰਗਣਿ ਦੇਣਿ ਨ ਜੋਰੁ ।।
ਜੋਰੁ ਨ ਜੀਵਣਿ ਮਰਣਿ ਨਹ ਜੋਰੁ ।।
ਜੋਰੁ ਨ ਰਾਜਿ ਮਾਲਿ ਮਨਿ ਸੋਰੁ ।।
ਜੋਰੁ ਨ ਸੁਰਤੀ ਗਿਆਨਿ ਵੀਚਾਰਿ ।।
ਜੋਰੁ ਨ ਜੁਗਤੀ ਛੁਟੈ ਸੰਸਾਰੁ ।।
ਜਿਸੁ ਹਥਿ ਜੋਰੁ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਸੋਇ ।।
ਨਾਨਕ ਉਤਮੁ ਨੀਚੁ ਨ ਕੋਇ ।।੩੩।।

तैंतीसवीं पउड़ी

आखणि जोरु चुपै नह जोरु ।।
जोरु न मंगणि देणि न जोरु ।।
जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु ।।

जोरु न राजि मालि मनि सोरु ।।
जोरु न सुरती गिआनि वीचारि ।।
जोरु न जुगती छुटै संसारु ।।
जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ ।।
नानक उतमु नीचु न कोइ ।।३३।।

संगति–

जीव को परमात्मा के अधीन क्यों कहा है?

शब्दार्थ–

ਆਖਣਿ (आखणि) = कथन। ਜੋਰੁ (जोरु) = शक्ति। ਰਾਜਿ (राजि) = ऐश्वर्य। ਮਾਲਿ (मालि) = धन। ਸੋਰੁ (सोरु) = चंचलता। ਸੁਰਤੀ (सुरती) = वेद ज्ञान।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि यह जीव पूर्णरूप से परमेश्वर के अधीन है। अकाल-पुरुष की कृपा के बिना जीव में बोलने का सामर्थ्य नहीं है, क्योंकि वाणी कब अवरुद्ध हो जायगी वह नहीं जानता। इसी प्रकार यदि जीव चुप भी रहना चाहे तो प्रकुपित वायु उसे बड़बड़ाने को बाध्य कर देती है। माँगने में भी जीव समर्थ नहीं है, वह माँगना कुछ और चाहता है, परन्तु मुख से निकल कुछ और ही जाता है—जैसे कुम्भकर्ण, वरदान चाहता था छः मास जागूँ और एक दिन सोऊँ परन्तु, उल्टा हो गया। दान देना, लेना भी जीव के अधीन नहीं है। जीवन और मरण सब विधि के हाथ है। मन को सदा व्याकुल रखने वाला राज्य-सुख और धन-वैभव भी जीव की पहुँच के बाहर है, क्योंकि कब राज्य परिवर्तन हो जाये या चञ्चला लक्ष्मी करवट बदल ले कोई नहीं जानता। शास्त्रीय ज्ञान, चिन्तन, संसार सागर से पार जाने की युक्ति, भुक्ति का ज्ञान भी मानव की शक्ति में नहीं है। गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि अगर किसी को अपनी स्वतन्त्र सत्ता पर भरोसा और विश्वास है तो वह इसकी परीक्षा करके देख सकता है। भगवान् राम के वनगमन और राजा दशरथ के मरण पर ननिहाल से लौटे भरत को गुरु वसिष्ठ भी कहते हैं—"सुनहु भरत भावी प्रबल, विलखि कहेउ मुनिनाथ। हानि, लाभ, जीवन, मरनु, जसु, अपजसु विधि हाथ"।। मात्र जन्म से कोई श्रेष्ठ और नीच नहीं होता यह सब तो कर्माधीन है।

सुभाषित–

जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु।

यहाँ जन्मना किसी की श्रेष्ठ या निकृष्ट मान्यता का प्रतिवाद किया गया है।

ਚੌਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਰਾਤੀ ਰੁਤੀ ਥਿਤੀ ਵਾਰ ।।
ਪਵਣ ਪਾਣੀ ਅਗਨੀ ਪਾਤਾਲ ।।
ਤਿਸੁ ਵਿਚਿ ਧਰਤੀ ਥਾਪਿ ਰਖੀ ਧਰਮ ਸਾਲ।।
ਤਿਸੁ ਵਿਚਿ ਜੀਅ ਜੁਗਤਿ ਕੇ ਰੰਗ ।।
ਤਿਨ ਕੇ ਨਾਮ ਅਨੇਕ ਅਨੰਤ ।।
ਕਰਮੀ ਕਰਮੀ ਹੋਇ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਸਚਾ ਆਪਿ ਸਚਾ ਦਰਬਾਰੁ ।।
ਤਿਥੈ ਸੋਹਨਿ ਪੰਚ ਪਰਵਾਣੁ ।।
ਨਦਰੀ ਕਰਮਿ ਪਵੈ ਨੀਸਾਣੁ ।।
ਕਚ ਪਕਾਈ ਓਥੈ ਪਾਇ।।
ਨਾਨਕ ਗਇਆ ਜਾਪੈ ਜਾਇ ।।੩੪।।

चौंतीसवीं पउड़ी

राती रुती थिती वार ।।
पवण पाणी अगनी पाताल ।।
तिसु विचि धरती थापि रखी धरमसाल ।।
तिसु विचि जीअ जुगति के रंग ।।
तिन के नाम अनेक अनंत।।
करमी करमी होइ वीचारु ।।
सचा आपि सचा दरबारु ।।
तिथै सोहनि पंच परवाणु ।।
नदरी करमि पवै नीसाणु ।।

कच पकाई ओथै पाइ ॥
नानक गइआ जापै जाइ ॥३४॥

संगति–

धरती को धर्मशाला क्यों कहा है?

शब्दार्थ–

ਰਾਤੀ (राती) = रात्रि। ਰੁਤੀ (रुती) = ऋतु। ਥਾਪਿ (थापि) = स्थापित। ਧਰਮਸਾਲ (धरमसाल) = धर्मशाला। ਕਚ (कच) = कच्चा, बुरा। ਪਕਾਈ (पकाई) = पक्का, भला। ਓਥੈ (ओथै) = वहाँ। ਗਇਆ (गइआ) = जाने पर। ਜਾਪੈ (जापै) = मालूम होता है।

भावार्थ–

कर्मकाण्ड के विषय में जिज्ञासा करने पर सद्‌गुरु जी सिद्धों को कहते हैं कि वाहिगुरु ने कर्मकाण्ड (कर्म) करने हेतु इस भूमण्डल में भारत भूमि को धर्मशाला के रूप में स्थित किया है। यह अकाल-पुरुष ही हैं जिन्होंने काल-विभाजन की दृष्टि से शिवरात्रि जैसी रात्रियों का निर्माण किया है और वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर ऋतुओं को बनाया है। प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया आदि १५ तिथियाँ; सोम, मंगल,बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, रवि ७ दिन एवं वायु, जल, अग्नि, आकाश और पृथ्वी ५ तत्त्वों का सृजन किया है। इस धरती पर स्थित इस धर्मभूमि भारत में कर्म करने वाले अनेक जाति, नाम, रंग, प्रकार के जीव निवास करते हैं। कर्मशील इन जीवों का विचार उनके द्वारा सम्पादित कर्मों के आधार पर होता है। अकाल-पुरुष सच्चे हैं और उनका दरबार (धाम) भी सच्चा है, जिसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ; साक्षी देने के लिए पंचों के रूप में उपस्थित होती हैं। किस जीव ने सच्चाई से अपने कर्मों को किया है या छल-कपट से केवल दुनियादारी के दिखावे के लिए जप-तप-दान किये हैं, इन सबका निर्णय प्रभु के यहाँ होता है। प्रभु आश्रित जीव उसके कृपा-कटाक्ष से जीवन परीक्षा में पक्के सच्चे अंक पाते हैं और बाह्य आडम्बर दिखावा करने वाले जीव कच्चे-चिट्ठे के साथ पुनः संसार में भेज दिये जाते हैं।

सद्‌गुरु जी कहते हैं, अच्छे-बुरे कर्मों की परख यहाँ असम्भव है, क्योंकि जीव के पास वह दिव्य-दृष्टि नहीं है, जिससे सच्चे और झूठे को जाना जा सके। अच्छे-बुरे का ज्ञान तो परमात्मा के पास जाने पर ही सम्भव है क्योंकि

वहाँ घट-घट में घटित घटनाओं को जानने वाले सर्वज्ञ, सर्वेश्वर स्वयं साक्षी रूप में विराजमान रहते हैं।

सुभाषित–

कच पकाई ओथै पाइ। नानक गइआ जापै जाइ॥

कच (झूठे) और पकाई (सच्चे) की परीक्षा अकाल-पुरुष के दरबार में ही सम्भव है।

ਪੈਂਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਧਰਮ ਖੰਡ ਕਾ ਏਹੋ ਧਰਮੁ ॥
ਗਿਆਨ ਖੰਡ ਕਾ ਆਖਹੁ ਕਰਮੁ ॥
ਕੇਤੇ ਪਵਣ ਪਾਣੀ ਵੈਸੰਤਰ ਕੇਤੇ ਕਾਨ ਮਹੇਸ ॥
ਕੇਤੇ ਬਰਮੇ ਘਾੜਤਿ ਘੜੀਅਹਿ ਰੂਪ ਰੰਗ ਕੇ ਵੇਸ ॥
ਕੇਤੀਆ ਕਰਮ ਭੂਮੀ ਮੇਰ ਕੇਤੇ ਕੇਤੇ ਧੂ ਉਪਦੇਸ ॥
ਕੇਤੇ ਇੰਦ ਚੰਦ ਸੂਰ ਕੇਤੇ ਕੇਤੇ ਮੰਡਲ ਦੇਸ ॥
ਕੇਤੇ ਸਿਧ ਬੁਧ ਨਾਥ ਕੇਤੇ ਕੇਤੇ ਦੇਵੀ ਵੇਸ ॥
ਕੇਤੇ ਦੇਵ ਦਾਨਵ ਮੁਨਿ ਕੇਤੇ ਕੇਤੇ ਰਤਨ ਸਮੁੰਦ ॥
ਕੇਤੀਆ ਖਾਣੀ ਕੇਤੀਆ ਬਾਣੀ ਕੇਤੇ ਪਾਤ ਨਰਿੰਦ ॥
ਕੇਤੀਆ ਸੁਰਤੀ ਸੇਵਕ ਕੇਤੇ ਨਾਨਕ ਅੰਤੁ ਨ ਅੰਤੁ ॥੩੫॥

पैंतीसवीं पउड़ी

धरम खंड का एहो धरमु ॥
गिआन खंड का आखहु करमु ॥
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस ॥
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस ॥
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस॥
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस॥

केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद ।।
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद ।।
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ।।३५।।

संगति–

कर्मकाण्ड को धर्मकाण्ड क्यों कहा है?

शब्दार्थ–

ਕਾਨ (कान) = कृष्ण। ਘਾੜਤੀ (घाड़ती) = बनावट। ਮੇਰੁ (मेरु) = सुमेरु पर्वत, पृथ्वी का मध्यभाग। ਧੂ (धू) = ध्रुव प्रदेश। ਸੂਰ (सूर) = सूर्य। ਕੇਤੀਆ (केतीआ) = कितनी। ਖਾਣੀ (खाणी) = योनियाँ। ਪਾਤ (पात) = पातशाह।

भावार्थ–

इस पौड़ी में कर्मकाण्ड को धर्मखण्ड कहने का तात्पर्य स्पष्ट है कि जैसे कर्म होगा वैसा ही फल मिलेगा। शरीर को धर्म का साधन कहा जाता है, क्योंकि कर्म का सम्पादन करने वाला शरीर ही है, अत: उसे अपने नियत स्नानादिक क्रियाओं से स्वस्थ और स्वच्छ रखना हमारा कर्त्तव्य (धर्म) है। धर्माचरण के पश्चात् 'ज्ञान' की चर्चा आरम्भ होती है। सिद्धों द्वारा पूछे जाने पर गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि ज्ञान और ज्ञानियों के आचरण को समझने के लिये तटस्थ भाव और तटस्थ विवेक की आवश्यकता है; क्योंकि वाहिगुरु जी ने ४९ प्रकार के पवन (वायु) रचित किये हैं, जिनमें प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, किकल, देवदत्त, धनंजय ये दश तो जीव के स्थूल शरीर में ही विराजमान हैं। इसी प्रकार (धरती) से जल के भी मीठा, फीका, कसैला, खारा आदि अनेक प्रकार के भेद हैं और अग्नि के भी दावाग्नि, जठराग्नि, बड़वाग्नि आदि भेद हैं। परमात्मा के कितने अवतार हुए हैं ? कोई २४ और कोई १० मुख्य मानते हैं। शिव के भी महेश, पिनाकी, शम्भु आदि ११ नाम हैं। संसार की सृष्टि करने वाले ब्रह्मा के स्वरूप भी अनेक हैं और इस सृष्टि में अनेक रूप, रंग, आकार-प्रकार और वेशभूषा वाले जीव हैं। इस कर्मभूमि (धर्मभूमि) भारत में ही असंख्य सुमेरु आदि पर्वत और ध्रुव प्रदेश हैं। कितने इन्द्र, चन्द्र, सूर्य मण्डल और देश-प्रदेश हैं, नहीं कहा जा सकता। अनेक सम्प्रदायों में विभक्त सिद्ध, बौद्ध, नाथ, देवी और उनके पहनावे भी असंख्य हैं। देव और दानव राक्षसों के भी विविध भेद हैं। मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, अथर्वन् ९ प्रमुख मुनि और कला, अनसूया, श्रद्धा,

हविभुग्, गति, क्रिया, ख्याति, अरुन्धती, शान्ति आदि मुनियों की धर्मपत्नियों के नाम हैं, जिनका विस्तृत वर्णन श्रीमद्भागवत् के चतुर्थ स्कन्ध में है। समुद्र-मन्थन के समय निकले १४ रत्न और ७ सागरों की भी चर्चा है। अण्डज, जारज, स्वेदज, उद्भिज ४ प्रकार की सृष्टि और परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी ४ प्रकार की प्रमुख वाणियों का वर्णन मिलता है। कितने राजा, महाराजा और उनकी पीढ़ियाँ, साधना की पद्धतियाँ और साधकों की कितनी संख्या है, विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता। गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि अनन्त-शक्ति-विभूषित (प्रभु) की तरह उनकी कृतियों का भी कोई अन्त नहीं है।

सुभाषित–

केतीआ सुरती सेवक केते 'नानक' अंतु न अंतु।

असीम ईश्वरीय विभूतियों का पारावार नहीं है, यही सत्य है।

ਛੱਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਗਿਆਨ ਖੰਡ ਮਹਿ ਗਿਆਨੁ ਪਰਚੰਡੁ ।।
ਤਿਥੈ ਨਾਦ ਬਿਨੋਦ ਕੋਡ ਅਨੰਦੁ ।।
ਸਰਮ ਖੰਡ ਕੀ ਬਾਣੀ ਰੂਪੁ ।।
ਤਿਥੈ ਘਾੜਤਿ ਘੜੀਐ ਬਹੁਤੁ ਅਨੂਪੁ ।।
ਤਾ ਕੀਆ ਗਲਾ ਕਥੀਆ ਨਾ ਜਾਹਿ ।।
ਜੇ ਕੋ ਕਹੈ ਪਿਛੈ ਪਛੁਤਾਇ ।।
ਤਿਥੈ ਘੜੀਐ ਸੁਰਤਿ ਮਤਿ ਮਨਿ ਬੁਧਿ ।।
ਤਿਥੈ ਘੜੀਐ ਸੁਰਾ ਸਿਧਾ ਕੀ ਸੁਧਿ ।।੩੬।।

छतीसवीं पउड़ी

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ।।
तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ।।
सरम खंड की बाणी रूपु ।।
तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु ।।

ता कीआ गला कथीआ ना जाहि ।।
जे को कहै पिछै पछुताइ ।।
तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ।।
तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ।।३६।।

संगति–

ज्ञानियों को श्रवणानन्द और दर्शनानन्द दोनों की प्राप्ति कैसे होती है?

शब्दार्थ–

ਪਰਚੰਡ (परचंड) = प्रखर, प्रधान, प्रमुख। ਤਿਥੈ (तिथै) = उनमें। ਨਾਦ (नाद) = श्रवणानन्द। ਬਿਨੋਦ (बिनोद) = दर्शनानन्द। ਕੋਡ (कोड) = भोगानन्द। ਸੁਧਿ (सुधि) = चेतनता।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी इस पौड़ी में उपासना (भक्ति) को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करते हुए कहते हैं कि यह सत्य है कि ज्ञान की प्रखरता की प्रमुखता है, क्योंकि उसके द्वारा अज्ञानान्धकार का अन्त होते ही साधक सृष्टि के केन्द्र-बिन्दु में पहुँच जाता है, जहाँ से उसे श्रवणानन्द, दर्शनानन्द और भोगानन्द की अनुभूति होने लगती है, जो बाह्य साधनों से किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं है। परन्तु सरमखण्ड (लज्जा, नम्रता, श्रम) की वाणी अवस्था तो अतुलनीय, अकथनीय है, क्योंकि इसमें साधक अपने निजी साधनं (भक्ति-भाव) से निर्विकार, निर्द्वन्द्व होकर अकाल-पुरुष के परम रूप का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करता है और सदा सद्-असद्-विवेकी वाणी से सभी का सत्कार करता है। ऐसे उपासक जहाँ भी पैर धरते हैं वह धरती, धर्मशाला बन जाती है, जो गुरुमुखों की रहनी, कहनी, बहिनी में समरसता भर देती है। ऐसे महापुरुषों की महिमा वाणी का विषय नहीं है। अगर कोई कोरा ज्ञानी इन भक्तिपरायण लोगों को छेड़ता है या कुछ समझाने का प्रयास करता है तो उसे 'उद्धव' की तरह पीछे पछताना पड़ता है, जिसकी ज्ञान-गठरी को व्रज की गोपाङ्गनाओं ने बेपर्द कर दिया था।

ज्ञान और उपासना (भक्ति) के अन्तर को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि उपासना द्वारा उपासक स्वयं द्रष्टा बन जाता है, जबकि ज्ञानी, ब्रह्मादि देवों की सृष्टि मात्र का केवल मूक दर्शक ही बना रहता है। उपासक को यह जानकारी

होती है कि इस कर्म से देवत्व की प्राप्ति होती है और इस काम को करने से व्यक्ति सिद्ध बनता है। श्रवण, मनन, चिन्तन, बुद्धि और ज्ञान के विषय हैं, जबकि प्रभु के प्रति समर्पणभाव, तन्मयता आदि उपासना के साधन हैं, जिनसे साधक स्वयं मुक्त होता हुआ औरों को भी भव-बन्धन से मुक्ति दिलाता है। इससे स्पष्ट है कि गुरु नानकदेव जी भक्ति को कर्म और ज्ञान से श्रेष्ठ मानते हैं, कारण स्पष्ट है कि कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड में अन्य साधनों की आवश्यकता पड़ती है, जबकि भक्ति में भगवान् को दिखाने के लिए केवल भावपूरित भावना ही पर्याप्त है।

सुभाषित–

ता कीआ गला कथीआ न जाहि। जे को कहै पिछै पछुताइ।।

यहाँ 'गला' शब्द गल्प, कथा, कहानियों की ओर संकेत करता है कि इनके द्वारा ईश्वर का प्रतिपादन असम्भव है।

ਸੈਂਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਕਰਮ ਖੰਡ ਕੀ ਬਾਣੀ ਜੋਰੁ ।।
ਤਿਥੈ ਹੋਰੁ ਨ ਕੋਇ ਹੋਰੁ ।।
ਤਿਥੈ ਜੋਧ ਮਹਾਬਲ ਸੂਰ ।।
ਤਿਨ ਮਹਿ ਰਾਮੁ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰ ।।
ਤਿਥੈ ਸੀਤੋ ਸੀਤਾ ਮਹਿਮਾ ਮਾਹਿ ।।
ਤਾ ਕੇ ਰੂਪ ਨ ਕਥਨੇ ਜਾਹਿ ।।
ਨਾ ਓਹਿ ਮਰਹਿ ਨ ਠਾਗੇ ਜਾਹਿ ।।
ਜਿਨ ਕੈ ਰਾਮੁ ਵਸੈ ਮਨ ਮਾਹਿ ।।
ਤਿਥੈ ਭਗਤ ਵਸਹਿ ਕੇ ਲੋਅ ।।
ਕਰਹਿ ਅਨੰਦੁ ਸਚਾ ਮਨਿ ਸੋਇ ।।
ਸਚ ਖੰਡਿ ਵਸੈ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ।।
ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲ ।।
ਤਿਥੈ ਖੰਡ ਮੰਡਲ ਵਰਭੰਡ ।।
ਜੇ ਕੋ ਕਥੈ ਤ ਅੰਤ ਨ ਅੰਤ ।।

ਤਿਥੈ ਲੋਅ ਲੋਅ ਆਕਾਰ ।।
ਜਿਵ ਜਿਵ ਹੁਕਮੁ ਤਿਵੈ ਤਿਵ ਕਾਰ ।।
ਵੇਖੈ ਵਿਗਸੈ ਕਰਿ ਵੀਚਾਰੁ ।।
ਨਾਨਕ ਕਥਨਾ ਕਰੜਾ ਸਾਰੁ ।।੩੭।।

सैंतीसवीं पउड़ी

करम खंड की बाणी जोरु ।।
तिथै होरु न कोई होरु ।।
तिथै जोध महाबल सूर ।।
तिन महि रामु रहिआ भरपूर ।।
तिथै सीतो सीता महिमा माहि ।।
ता के रूप न कथने जाहि ।।
ना ओहि मरहि न ठागे जाहि ।।
जिन कै रामु वसै मन माहि ।।
तिथै भगत वसहि के लोअ ।।
करहि अनंदु सचा मनि सोइ ।।
सच खंडि वसै निरंकारु ।।
करि करि वेखै नदरि निहाल ।।
तिथै खंड मंडल वरभंड ।।
जे को कथै त अंत न अंत ।।
तिथै लोअ लोअ आकार ।।
जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार ।।
वेखै विगसै करि वीचारु ।।
नानक कथना करड़ा सारु ।।३७।।

संगति–

कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड से कृपाकाण्ड को अधिक महत्त्व क्यों दिया गया है?

शब्दार्थ–

ਜੋਰੁ (जोरु) = अमोघ बल। ਮਹਿ (महि) = बीच में। ਸੀਤੋ (सीतो) = सीतल, समाहित। ਠਾਗੇ (ठागे) = वंचित, ठगा जाना। ਨਿਹਾਲ (निहाल) = सुखी। ਵਰਭੰਡ (वरभंड) = ब्रह्माण्ड। ਲੋਅ (लोअ) = लोक। ਜਿਵ ਜਿਵ (जिव जिव) = जैसी जैसी। ਤਿਵ ਤਿਵ (तिव तिव) = तैसी तैसी। ਕਰੜਾ (करड़ा) = कठोर, ठोस। ਸਾਰੁ (सारु) = फौलाद।

भावार्थ–

प्रभु की कृपादृष्टि के बिना जीव में किसी प्रकार की भी हलचल नहीं हो सकती। करम (कृपा) की वाणी जोड़ती है, तोड़ती कभी नहीं, इसीलिए वह बलशाली है। ईश्वरीय कृपाप्राप्त साधक सदा सच्चिदानन्द की संगति में रहता है, जहाँ कोई स्वकीय, परकीय नहीं होता। यहाँ उपासकों में शरीर पर नियन्त्रण रखने वाले योद्धा रथी, वाणी आदि इन्द्रियों पर संयम रखने वाले शूरवीर महारथी और मन को जीतने वाले वीर-अतिरथी होते हैं; क्योंकि उनके रोम क्षेत्र में श्रीराम का निवास होता है। यहाँ पहली बार राम और सीता का नाम आया है, जिसका भाव है कि श्रीराम अपनी महिमारूपी सीता के साथ ऐसे रहते हैं जैसे सिले कपड़े में तागा। यही स्थिति साधक की भी है, वह भी प्रभु के साथ एकाकार होकर रहता है, जिसे न तो काल का भय होता है और न ही संसार की माया उसे धोखा दे सकती है। जहाँ ऐसे साधक रहते हैं वहाँ और लोग भी उनकी सेवा करते हैं और सच्चे मन में आनन्द की अनुभूति प्राप्त करते हैं।

अपने इसी सत्य व्यवहार और सदाचरण से जीव, सच्चखण्ड में प्रविष्ट होता है, जहाँ बैठकर अकाल-पुरुष स्वयं अपनी सृष्टि का अवलोकन करते हैं। प्रभु की इस रचना में अनेक ब्रह्माण्ड हैं जिनकी गणना करनी असम्भव है। अपने अज्ञान से यदि कोई इनकी गणना करने का दम्भ करता है तो उसे अन्त में अपने निरर्थक कार्य के लिए पश्चात्ताप करना पड़ता है; क्योंकि अनन्त के कार्यों का कहीं अन्त नहीं है। अकाल-पुरुष के राज्य में नित्य ही नवीन रचनाओं का सृजन हो रहा है जिसके पीछे उस परमात्मा का आदेश ही कारण है। अपनी अभिनव कृतियों को देख-देखकर कृपानिधान प्रसन्न होते हैं। गुरु नानकदेव जी की मान्यता है कि जैसे धातुओं में सोने के आभूषणों का निर्माण कठिन होता है, वैसे ही साधारण जीव के लिये प्रभु की सृष्टि का वर्णन भी जटिल है।

धर्म, ज्ञान, श्रम, कर्म और सच्चखण्ड के साथ लगे 'खण्ड' शब्द का संकेत सम्भवतः यह है कि कोई व्यक्ति सीधे नहीं, अपितु पहले क्रमशः

धर्मखण्ड, ज्ञानखण्ड, श्रमखण्ड, कर्मखण्ड को पार करके ही सच्चखण्ड में पहुँच सकता है, ये पाँच अवस्थाएँ ही साधक को सच्चिदानन्दस्वरूप अकाल-पुरुष का साक्षात्कार करा सकती हैं, ऐसा जापक, साधक का विश्वास है।

सुभाषित–

ना ओहि मरहि न ठागे जाहि ।
जिन कै रामु वसै मन माहि ।।
तिथै जोध महाबल सूर ।
तिन महि रामु रहिआ भरपूर ।।
तिथै सीतो सीता महिमा माहि ।
ताके रूप न कथने जाहि ।।

यहाँ राम और सीता शब्द का प्रयोग सारगर्भित है।

ਅਠੱਤੀਵੀਂ ਪਉੜੀ

ਜਤੁ ਪਾਹਾਰਾ ਧੀਰਜੁ ਸੁਨਿਆਰੁ ।।
ਅਹਰਣਿ ਮਤਿ ਵੇਦੁ ਹਥੀਆਰੁ ।।
ਭਉ ਖਲਾ ਅਗਨਿ ਤਪ ਤਾਉ ।।
ਭਾਂਡਾ ਭਾਉ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਤਿਤੁ ਢਾਲਿ ।।
ਘੜੀਐ ਸਬਦੁ ਸਚੀ ਟਕਸਾਲ ।।
ਜਿਨ ਕਉ ਨਦਰਿ ਕਰਮੁ ਤਿਨ ਕਾਰ।।
ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਨਦਰੀ ਨਿਹਾਲ ।।੩੮।।

अठतीसवीं पउड़ी

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ।।
अहरणि मति वेदु हथीआरु ।।
भउ खला अगनि तप ताउ ।।
भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि ।।
घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ।।

जिन कउ नदरि करमु तिन कार।।
नानक नदरी नदरि निहाल।।३८।।

संगति–

'ब्रह्मशब्द' के निर्माण के साधन क्या हैं?

शब्दार्थ–

ਜਤੁ (जतु) = संयम। ਪਾਹਾਰਾ (पाहारा) = भट्ठी। ਧੀਰਜ (धीरज) = धैर्य। ਅਹਿਰਣੀ (अहिरणी) = नेहाई, सुनार, जिस पर सोने को रख कर पीटता है। ਖਲਾ (खला) = धौंकनी। ਤਾਉ (ताउ) = अग्नि। ਤਿਨੁ (तिनु) = उसमें। ਟਕਸਾਲ (टकसाल) = कारखाना।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी 'ब्रह्म' शब्द की निर्माण विधि का वर्णन करते हुए कहते हैं कि अनश्वर शब्द के निर्माण की टकसाल (कारखाना) अनोखी और विचित्र है। स्वर्ण आभूषण निर्माण के रूपक द्वारा यहाँ गुरु, उपदेशक द्वारा शब्द निर्माण को समझाया गया है। शब्द निर्माण में मन का नियमन (संयम) ही पहारा (भट्ठी) है। धैर्यरूपी सुनार जब बुद्धिरूपी अहरणि (नेहाई—जिस पर सुनार सोने को रखकर पीटता है) पर वेद (अनुभव ज्ञान) रूपी हथौड़ी से धीरे-धीरे ठोंकता है, भगवान् के भयं से, धौंकनी, जिससे सुनार फूँख मारता है, से तपश्चर्या अग्नि को प्रज्वलित करता है और प्रभु अनुरागरूपी बर्तन में जपरूपी पदार्थ डालने पर सत्संग शब्द निर्माण की यह टकसाल चलती है। यह कार्य सरल नहीं, इसमें सत्संगरूपी टकसाल में ब्रह्म की प्राप्ति शब्द का निर्माण होता है, जिसमें संयम, धैर्य, बुद्धि, ज्ञान, भगवान्, अनुराग, तप, नाम ये आठ साधन आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी हैं। इन साधनों के रहते हुए भी यदि प्रभुं की कृपा नहीं है, तो साधक के सभी प्रयास निष्फल हो जाते हैं। अतः प्रभु की दया आवश्यक है, ईश की कृपा से असंख्य गुरुमुख कृतकृत्य हो गये हैं।

सुभाषित–

घड़ीऐ सबदु सची टकसाल।

यहाँ रूपक द्वारा शब्द (ब्रह्म) के निर्माण की विधि का वर्णन किया गया है। साधारण स्वर्ण के गहनों को गढ़ने वाली टकसाल से सच्ची टकसाल को श्रेष्ठ कहा है।

●

फलश्रुतिः

ਸਲੋਕੁ

ਪਵਣੁ ਗੁਰੂ ਪਾਣੀ ਪਿਤਾ ਮਾਤਾ ਧਰਤਿ ਮਹਤੁ ।।
ਦਿਵਸੁ ਰਾਤਿ ਦੁਇ ਦਾਈ ਦਾਇਆ ਖੇਲੈ ਸਗਲ ਜਗਤੁ ।।
ਚੰਗਿਆਈਆ ਬੁਰਿਆਈਆ ਵਾਚੈ ਧਰਮੁ ਹਦੂਰਿ ।।
ਕਰਮੀ ਆਪੋ ਆਪਣੀ ਕੇ ਨੇੜੈ ਕੇ ਦੂਰਿ ।।
ਜਿਨੀ ਨਾਮੁ ਧਿਆਇਆ ਗਏ ਮਸਕਤਿ ਘਾਲਿ ।।
ਨਾਨਕ ਤੇ ਮੁਖ ਉਜਲੇ ਕੇਤੀ ਛੁਟੀ ਨਾਲਿ ।।੧।।

सलोकु

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ।।
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ।।
चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि ।।
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ।।
जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ।।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ।।१।।

संगति–

इस जीव जगत् का गुरु, पिता, माता, दाया, दायी कौन हैं और यह अपना कल्याण कैसे करता है?

शब्दार्थ–

ਪਵਣੁ (पवणु) = वायु। ਪਾਣੀ (पाणी) = जल। ਧਰਤਿ (धरति) = भूमि। ਮਹਤਿ (महति) = महान्। ਦਿਵਸ (दिवस) = दिन। ਰਾਤਿ (राति) = रात। ਦੁਇ (दुइ) = दो। ਸਗਲ (सगल) = सम्पूर्ण। ਜਗਤੁ (जगतु) = संसार। ਚੰਗਿਆਈਆ

(चंगिआईआ) = अच्छाइयाँ। ਧਰਮੁ (धरमु) = धर्मराज। ਹਦੂਰਿ (हदूरि) = पास। ਨੇੜੈ (नेड़े) = नज़दीक। ਜਿਨਿ (जिनि) = जिन्होंने। ਮਸਕਤਿ (मसकति) = कष्ट, मेहनत। ਘਾਲਿ (घालि) = पार करना। ਕੇਤਿ (केति) = कितने। ਨਾਲਿ (नालि) = साथ।

भावार्थ–

गुरु नानकदेव जी ने 'जपुजी' के मंगलाचरणरूपी मन्त्र १ ओंकार सतिनाम करता पुरूखु आदि में जिस अध्यात्मवाद का बीज वपन किया है उसी का उपसंहार (निष्कर्ष) दर्शाते हुए कहते हैं—हे सिंद्धों! भगवान् की रचना इस संसाररूपी सुत (बालक) के गुरु पवन देवता हैं। पवन को गुरुं कहने का तात्पर्य स्पष्ट है कि जिस तरह इन्द्रियों में वायु की प्रधानता है, उसी तरह शिष्य के जीवन में गुरु का भी सर्वोत्तम स्थान है। पवन (प्राण) के बिना जैसे शरीर-यात्रा असम्भव है, उसी तरह गुरु-ज्ञान बिना जीवन यात्रा भी अधूरी है। पवन (वायु-प्राण) की तरह गुरु की गति भी अबाध रूप से चलती है। जल को पिता कहने का भाव स्पष्ट है कि जिस तरह जल के बिना जगत् की उत्पत्ति नहीं होती, उसी तरह बालक के जन्म में जनक की भी अनिवार्यता है। धरती को बड़ी माता कहना भी सारगर्भित है; क्योंकि माँ तो पुत्र को नौ मास तक सामान्य गर्भ में पोषित करने के बाद, फिर जन्मभूमि की ही गोद में उतार देती है। यह धरती ही है जो बाद में बालक को आजीवन अपने अन्न, जल, वायु से लालित, पालित, पोषित करती है। रात्रि को दाई कहने का भाव है, जिस तरह बालक को दाई, रात्रि में लोरियाँ देकर सुलाती है वैसे ही श्रान्त जगत् के जीवों को रात्रि पूर्ण विश्राम देती है। ऋग्वेद के रात्रिसूक्त में इसी आशय की पुष्टि की गयी है। अगर रात-दिन न हों तो संसार का सम्पूर्ण व्यवहार और व्यापार चौपट हो जायगा। काल (समय) के प्रतिनिधि स्वरूप इन रात-दिन में जो भी जीव अच्छाइयाँ या बुराइयाँ करता है उन्हें मृत्यु के बाद धर्मराज के सामने पढ़ा जाता है। चित्रगुप्त हमारे गुप्त चरित्र-चित्रों का चित्रण करता है, जिन्हें सुनं और देखकर जीव चकित होता है। ईश्वर तटस्थ भाव से हमारे कर्मों के अनुसार फल देते हैं, जिससे सत्कर्मी तो प्रभु की समीपता प्राप्त करते हैं और कुकर्मी यम-यातनाओं के बाद पुनः संसार के चक्र में फेंक दिये जाते हैं।

गुरु नानकदेव जी कहते हैं जो गुरुमुख प्रभु का नाम स्मरण करते हैं, उसकी महिमा का श्रवण, मनन और ध्यान करते हैं, वे अपने जप, तप की मेहनत (कृति) को सार्थक कर जाते हैं। अर्थात् ऐसे लोगों को सांसारिक दुःखों का क्लेश कभी नहीं होता। इतना ही नहीं ये मुक्त महापुरुष अपने साथ अपने

संगी-साथियों का भी उद्धार कर जाते हैं। संस्कृत भाषा में कहा भी है—

> ये पापं शमयन्ति संगतिकृतां, ये सन्ति भृङ्गारिणो,
> येषां चित्तमतीवनिर्मलतरं येषां न भग्नं व्रतम्।
> ये सर्वान् सुखयन्ति च प्रतिदिनं ते साधवो दुर्लभाः,
> गङ्गावद्, गजगण्डवद्, गगनवद्, गाङ्गेयवद्, गेयवत्।।

आज के सन्दर्भ में यदि इस सलोक (श्लोक) को चरितार्थ किया जाये तो वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण और पृथ्वी-प्रदूषण की समस्या का निदान सुलभ है; क्योंकि माता, पिता और गुरु के लिए तो भारतीय संस्कृति में 'मातृमान्, पितृमान्, आचार्यमान् होने का उपदेश दिया गया है।

सुभाषित–

> जिनी नामु धिआइआ गए मंसकति घाल।।

।। जपुजी साहिब पूर्णम् ।।



परिशिष्ट-क

'देग' से 'तेग' तक का संक्षिप्त सिखी–सफ़र

मैकाले, मैक्समूलर, मैकडोनेल, आदि पाश्चात्य विदेशी विद्वानों के वाक्यों/वचनों को वेदवाक्य मानने वाले कतिपय भारतीयों के मुख से जब हम चीनी यात्री फाहियान, ह्वेनसांग, युनानी यात्री (मेगस्थनीज़), पुर्तगाली यात्री (वास्कोडिगामा) आदि यात्रियों के यात्रा सम्बन्धीं स्तुति-गान सुनते हैं तो हमें आश्चर्य होता है कि ये लोग विश्व की सबसे लम्बी पद-यात्रा करने वाले सिख धर्म के आदि सद्गुरु नानकदेव जी (१४६९–१५३९) के बारे में अनभिज्ञ क्यों हैं? सर्वधर्म-समन्वय का सन्देश सम्पूर्ण संसार को सुनाने के लिए इस महान् विभूति ने चार उदासी (यात्राएँ) कीं, जिनमें भारत के अतिरिक्त लंका, बर्मा, जावा, सुमात्रा, मक्का, मदीना, बगदाद आदि अरबी स्थानों की गणना की जाती है। आपने अपने सर्वोत्कर्षबोधक दिव्यज्ञान से जिस भाईचारे का पाठ पढ़ाया, उसका दूसरा उदाहरण यदि इतिहास में ढूँढ़ना असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य है। अपने 'सच्चे सौदे' को 'तेरा–तेरा ही तेरा' कहकर जिस तरह आपने अपने कलेजे की कसक को व्यक्त किया उससे आपका यह कथन स्वयं ही चरितार्थ हो उठता है—

> "वैद बुलाया वैदगी पकड़ ढँढोले बाँह।
> भोला वैद न जानई करक कलेजे माँहि।।"
>
> (राग, मल्हार, वार, महला।)

पहली शहीदी—

त्रिरत्न—१. किरत करनी (श्रम करना), २. वण्ड छकना (बाँट कर खाना), ३. नाम जपना। इन तीन सिद्धान्तों के प्रचार–प्रसार में ही अपना सीधा सादा जीवन व्यतीत करने वाली यह सिख जाति जो परम वैष्णव थी, उसने देग के साथ तेग (तलवार) क्यों उठा ली? यह एक विचारणीय विषय है। लगता है अपनी संस्कृति, संस्कारों के संरक्षण में तत्पर हमारे श्रीगुरु नानकदेव, श्रीगुरु अंगददेव, श्रीगुरु अमरदास, श्री रामदास और पंचम पातशाही श्री अर्जुन-देव जी

के बढ़ते सामाजिक प्रभाव से मुगल शासक जहाँगीर का आसन हिल उठा और उसने परोपकारी, गरीब-निवाज, शरणागतवत्सल श्री अर्जुनदेव को शहीदी हेतु बाध्य किया। सिख धर्म के इतिहास में अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध यह लाहौर शहर में दी गयी शहीदी थी, मई, १६०६ में। बस, यहीं से सिखी साहित्य के सागर नें अपना शान्त रस छोड़कर वीर रस अपनाया, जो आगे चलकर रौद्ररस में परिणत हो गया।

श्री गुरुग्रन्थ साहिब

भाषाविज्ञान के वेत्ता जानते हैं कि ब्राह्मी, देवनागरी, गुरुमुखी लिपि को छोड़कर सभी लिपियाँ किसी निजी क्षेत्र से प्रचलित हैं। गुरुमुखी शब्द से ही सन्तों, गुरुओं का गौरवमय इतिहास स्मरण हो उठता है और सच्चे राष्ट्रभक्त का रोम-रोम हर्षित। इसी गुरुमुखी भाषा में मुद्रित १४३० पृष्ठ का श्री गुरुग्रन्थ साहिब आजकल उपलब्ध है जिसे पञ्चमपातशाही श्री गुरु अर्जुनदेव जी ने भाई गुरुदास की देखरेख में तैयार कराया था। इस पावन ग्रन्थ में ९७४ पद और श्लोक श्री गुरु नानकदेव जी के हैं, ६२ श्रीगुरु अंगददेव जी के, ९०७ श्री गुरु अमरदास जी के, ६७९ श्री गुरु रामदास जी के, २२१८ पद श्री गुरु अर्जुनदेव जी के हैं। मूल बीड़ (ग्रन्थ) में ११५ पद श्री गुरु तेगबहादुर जी के नहीं हैं, क्योंकि इन्हें दशम पातशाही श्री गुरुगोविन्द महाराज ने अपने समय वर्तमान बीड़ में जुड़वाया था। छः गुरुओं की वाणियों के अतिरिक्त तत्कालीन श्री जयदेव, नामदेव, त्रिलोचन, परमानन्द, सदना वेणी, रामानन्द, धन्ना, पीपा, सेन, कबीर, रविदास, मीरा, सूरदास, भाई मरदाना, भाई सुन्दर आदि की वाणियाँ भी संगृहीत हैं। गुरुग्रन्थ साहिब में 'जपुजी साहिब' के मंगलाचरण '१ ओंकार सतिनाम करता पुरखु' आदि की आवृत्ति होती है। श्री गुरुग्रन्थ साहिब का पाठ भोग प्रत्येक मांगलिक या अमांगलिक कार्यों में पड़ता है, क्योंकि यह ग्रन्थ सिखी धर्म का आधार है, जिसमें विभिन्न ३१ रागों का प्रयोग हुआ है। इस ग्रन्थ की विशेषता है कि इसके पाठ में थोड़ा भी पाठभेद नहीं हुआ अर्थात् यह अपने मूल रूप में ज्यों का त्यों ही है।

दूसरी शहीदी–

गुरुवाणी को तन-मन-धन से आदर देने वाले सभी सद्‌गुरुओं ने अपने तप, त्याग, बलिदान से इस सिखी के वटवृक्ष को पुष्ट किया, जिसकी नींव श्री गुरु नानकदेव जी ने १५वीं शताब्दी में रखी थी। गुरु हरिगोविन्द, गुरु

हरिराय, गुरु हरिकृष्ण साहिब के बाद नौवीं पातशाही गुरु तेगबहादुर जी ने गुरुगद्दी सँभाली। हिन्द की चादर गुरु तेगबहादुर को हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान की रक्षा हेतु काश्मीरी ब्राह्मणों की प्रार्थना पर ११ नवम्बर, १६७५ में दिल्ली के चाँदनी चौक में अपने प्राणों का दान करना पड़ा। इस बलिदान ने सभ्य समाज की आँखें खोल दीं और मुगल बादशाह औरंगजेब की दुर्निति, दुरभिसन्धि की पोल को उजागर कर दिया। यह दूसरा धमाका था मुगल सल्तनत के ताबूत (अर्थी) में जोरदार कील ठोंकने का, जिसमें देग से तेग की ओर उत्साह के साथ बढ़ने का बलिदानी आदेश था।

शहीदों की फौज

'रंगरेटे गुरु के बेटे' भाई जेता सिंह ने पूरे देश में गुरु तेगबहादुर जी का आदेश—'न किसी से डरो, न किसी को डराओ' पहुँचाया। दशम पातशाही गुरु गोविन्द सिंह महाराज ने सन् १६९९ के वैशाखी के दिन खालसा पन्थ की नींव रखी और पाँच प्यारों को अमृत छकाकर उसके बाद उनके हाथों स्वयं अमृतपान किया और इस उक्ति को सिद्ध कर दिया—'आपे गुरु आपे चेला'। विश्व के इतिहास में ऐसा जननायक शायद ही कहीं मिले जो राष्ट्र, जाति, धर्म और हिन्दू समाज की रक्षा के लिये स्वयं अमृतदानी गुरु बने और पीछे स्वयं ही अपने सेवकों का सेवक बनकर उनके हाथों अमृतपान करे। शहीदों की सेना खड़ी करने वाले सर्वस्वदानी श्री गुरु गोविन्द सिंह महाराज ने अपने दो बड़े साहबजादे श्री बाबा अजीत सिंह तथा बाबा जुझार सिंह को देशहित में चमकौर की लड़ाई में शहीद करा दिया और दो छोटे साहबजादे बाबा जोरावर सिंह एवं बाबा फतेह सिंह को धर्म, देश की रक्षा हेतु सरहिन्द की दीवारों में जिन्दा चिनवा कर शहीद करा दिया और पूछने पर जीवित कई हजार कहकर सन्तोष प्रकट किया।

बन्दावीर वैरागी ने गुरुपुत्रों का बदला लेकर गुरुभक्ति का जो परिचय दिया उसे तो सरहिन्द के खण्डहर और सूबेदार वजीर खाँ के परिवार के लोग बता सकते हैं, जो आज भी कबरों में पड़े कयामत के दिन का बड़ी बेसब्री से इन्तजार कर रहे हैं और शेष जीवित लोग, हरि सिंह नलुआ का नाम लेकर आज भी अपनी सन्तान को अफगानिस्तान आदि देशों में डराते हैं कि बाहर मत जाओ नलुआ पकड़ लेगा।

दशम ग्रन्थ

वीरता और आध्यात्मिकता के पुंजीभूत परमाराध्य श्री गुरु गोविन्द सिंह महाराज की रचना 'दशम ग्रन्थ' मानवता के उत्थान की कुंजी है और भारतीय

सांस्कृतिक सन्देशों का भण्डार है। भारतीय जनता की भीरुता, निराशा को दूर करना श्री दशमग्रन्थ का प्रयोजन है। धार्मिक उपयोगिता के साथ ही साथ इस ग्रन्थ का साहित्य मूल्यांकन बहुत ही उत्कृष्ट है। दशम ग्रन्थ का सारांश इस सवैये में परिलक्षित है—

धन्य जीउ तेहि को जग में मुख ते हरि चित्त में युद्ध विचारे।
देह अनित न नित रहे जस नाव चढ़े भवसागर तारे।।

इस ग्रन्थ के आरम्भ में जापुजी साहिब, काल अस्तुत, चौबीस अवतार, श्रीमद्भागवत पर आधारित श्रीकृष्णचरित, चण्डीचरित्र, चण्डीदीवार, विचित्र नाटक (आत्मकथा) के उपाख्यान बड़े ही प्रभावशाली हैं, जिन्हें भारतीय वाङ्मय की अपूर्व निधि कहा जा सकता है।

श्री गुरु नानकदेव ज़ी के अनुयायियों में उदासी सम्प्रदाय, निर्मल सम्प्रदाय, सुथरा शाही, अकाली विचारों के लोग प्रमुख हैं, जिन्होंने गुरुमत और गुरुपत की रक्षा हेतु सदैव अपने-अपने तरीके से बौद्धिक एवं शारीरिक योगदान किया है। इसकी जितनी भी प्रशंसा की जाये थोड़ी ही होगी। मुस्लिम शासकों से विशेषकर मुगल बादशाहों से 'खालसा' ने जो अपने धर्म, देश, जाति की रक्षा हेतु लोहा लिया, वह निःसन्देह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। महाराजा रणजीत सिंह द्वारा पंजाब में सिखी राज्य की स्थापना इन्हीं धर्मवीर, कर्मवीर खालसा योद्धाओं के त्याग का ही सुफल रहा है।

सद्गुरुविलास और नामधारी दरबार

नामधारी बाबा सन्तोख सिंह की रचना "सद्गुरुविलास" में नामधारी दरबार भैणी साहिब–जनपद लुधियाना (पंजाब) का विस्तृत परिचय मिलता है। शेरे पंजाब महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु सन् १८३९ में हो गयी और सन् १८४९ में अंग्रेजों ने अपनी कूटनीति से पंजाब की स्वतन्त्रता छीन ली। प्रतिबन्धित गोवध को पुनः चालू कर दिया, अंग्रेजी भाषा को अध्ययन का अनिवार्य माध्यम बनाया गया और भारतीय संस्कृति, संस्कारों को नष्ट-भ्रष्ट करने हेतु कैरी आँखों वाले ब्रिटेन के इन बिल्लों ने 'बाइबिल' के कोरे आदर्शों से भारतीय भावनाओं को भस्मीभूत करने का बीड़ा उठा लिया। यह सब देखकर श्री सद्गुरु रामसिंह ने भगवान् रामचन्द्र की तरह 'निशिचरहीन करौं महि भुज उठाइ प्रण कीन्ह" के साथ सन् १८५७ की वैशाखी पर 'सन्त खालसा' की स्थापना कर पूरे पंजाब को २२ सूबों में बाँटकर वहाँ अपने सूबेदार नियुक्त

कर दिये, जिन्होंने सिर हिला-हिलाकर ऐसी कूक मचाई कि सम्पूर्ण पंजाब ही नहीं पूरा भारत जाग उठा। यह सच है कि कुछ स्वार्थी, लोलुप आम्भीक, जयचन्द्र मीर जाफिर के अनुयायियों ने इन देशभक्त, धर्मरक्षक, परम वैष्णव सन्त-खालसा के वीरों के बढ़ते कदमों पर प्रहार किये, छद्मवेशी इन अंग्रेज भक्तों के चलते ही गो-रक्षा एवं हरि मन्दिर साहिब की रक्षा हेतु अमृतसर की पावन धरती पर नामधारी कूकों ने बलिवेदी पर अपने प्राण न्योछावर कर दिये; परन्तु अपने प्रण पर आँच नहीं आने दिये। मलेर कोटला की मार्मिक व्यथा की कथा आज भी शहीद स्मारक के रूप में पुकार-पुकार कर कह रही है कि कहाँ हैं मेरे गुरुभक्त गौ, गरीबों के प्रतिपालक वे शहीद, जिन्होंने नाभा, जीन्द, पटियाला रियासतों से लाई गयी तोपों का सीना तानकर सामना किया था, कमर झुकायी थी कुर्बानी के लिये आगे कदम बढाने के लिये किन्तु, घुटने नहीं टेके थे सिर-फिरे फिरंगियों के आगे। इतिहास साक्षी है कि गुरुओं की पावन परम्परा के पालक, भारतीय स्वतन्त्रता के अप्रतिम योद्धा श्री सद्गुरु रामसिंह ने रंगून जाना स्वीकार किया, परन्तु अपनी सफेद पगड़ी पर दाग नहीं लगने दिया।

श्री सद्गुरु हरिसिंह (१८७२ से १९०६ ई.) तथा सद्गुरु प्रतापसिंह (१९०६ से १९५९ ई.) ने राष्ट्रीय आन्दोलन में जो योगदान किया, उसे कोई कृतज्ञ जाति नहीं भुला सकती, कृतघ्न पुरुष तो कुछ भी कर सकता है। सन् १८७२ से १९२३ तक जो दमन चक्र चलाया गया कूकों पर, उससे मानवता कलंकित हुई है और दानवता भी चकित है कि मेरा काम मानव ने कैसे कर दिया?

वर्तमान सद्गुरु श्री जगजीत सिंह जी महाराज में तो देग के खौलते पानी में भी संगीत-साहित्य की सरस तानें भरने की क्षमता है। सादे आनन्द कारज (विवाह) में प्राचीन विधि-विधान वाले हवन से समाज में समरसता लाने का कार्य निःसन्देह श्लाघनीय है। यह है देग से तेग तक चलने वाला सिखी इतिहास जिस पर प्रत्येक सच्चे भारतीय को गर्व है। अकाल-पुरुष श्री सद्गुरु महाराज से प्रार्थना है कि यह देग और तेग सदा देश, धर्म के हित में चलता रहे।



परिशिष्ट-ख

अभिधानकोश

(गुरुवाणी में आये कतिपय शब्द)

ਜੁਗ (जुग-युग)–
(पउड़ी ७)

युग चार हैं—

१. सत्ययुग — १७,२८००० वर्ष प्रमाण है।
२. त्रेतायुग — १२,९६००० वर्ष प्रमाण है।
३. द्वापरयुग — ८,६४००० वर्ष प्रमाण है।
४. कलियुग — ४,३२०.०० वर्ष प्रमाण है।

ਨਵ ਖੰਡ (नव खण्ड)–

१. इलावृत्त खण्ड— सुमेरु पर्वत भाग।
२. रम्यक खण्ड— (मत्स्यावतार पूजन स्थल) इलावृत्त के उत्तर भाग में।
३. हिरण्यमय खण्ड— (कच्छपावतार पूजनं स्थल) नील पर्वत,. श्वेत पर्वत और शृंगवान् पर्वत, सीमा पर्वत है।
४. कुरु खण्ड— (वराहावतार पूजन स्थल)
५. हरिवर्ष खण्ड— (नृसिंहावतार पूजन स्थल)
६. किम्पुरुष खण्ड— (हनुमान् जी का स्मरण स्थल) इलावृत्त के दक्षिण में।
७. भारत (भरत) खण्ड— (नर-नारायण स्मरण स्थल) निषध, हेमकूट, हिमालय के पूर्व–पश्चिम में।
८. केतुमाल खण्ड— (लक्ष्मी के साथ हरि स्मरण स्थल) इलावृत्त के पूर्व-पश्चिम भाग में।
९. भद्राश्व खण्ड— (हयग्रीव स्मरण स्थल) माल्यवान्, गन्धमादन, सीमा पर्वत हैं।

ਦੀਪ (द्वीप)–
(पउड़ी ८)

१. जम्बूद्वीप—जहाँ हम भारतीय निवास करते हैं।
२. प्लक्षद्वीप— मेरुपर्वत से घिरा है।
३. शाल्मलिद्वीप— क्षीर समुद्र से घिरा है।
४. कुशद्वीप— इक्षु (गन्ने के रस) सागर से घिरा है।
५. क्रौञ्चद्वीप— घृतसागर से घिरा है।
६. शाकद्वीप— मट्ठे के सागर से घिरा है।
७. पुष्करद्वीप— शुद्धोदक सागर से घिरा है।

ਲੋਅ (लोक)–

(ऊपर के लोक हैं)
१. भूः
२. भुवः
३. स्वः
४. महः
५. जनः
६. तपः
७. सत्य

(नीचे के लोक हैं)
८. अतल
९. वितल
१०. सुतल
११. तलातल
१२. महातल
१३. रसातल
१४. पाताल

ਸਾਸਤ (शास्त्र)–
(पउड़ी ९)

आस्तिक-शास्त्र—

१. सांख्यशास्त्र— कपिल मुनि
२. योगशास्त्र— महर्षि पतञ्जलि
३. वैशेषिकशास्त्र— महर्षि कणाद
४. न्यायशास्त्र— गौतम मुनि
५. पूर्वमीमांसा— जैमिनि
६. वेदान्तशास्त्र (उत्तरमीमांसा)— वेदव्यास

नास्तिक-शास्त्र—

१. चार्वाक (लोकायत)— सिद्धान्त देहात्मवादी है, जो प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता है।

यावज्जीवेद् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

२. जैन— २४ तीर्थंकर हैं। अहिंसा की प्रधानता है।

३. बौद्ध— पंचशील में विश्वास।

४. योगाचार— इस की मान्यता है कि बुद्धि का ग्राह्य कोई पदार्थ नहीं है। ज्ञान की सत्ता मानने से इसे विज्ञानवादी भी कहा गया है।

५. वैभाषिक— भुक्ति-मुक्ति दोनों की साधना में लगने के कारण अन्त में यह अनाचार बन गया—वज्रयान।

६. सौत्रान्तिक— पदार्थों का बुद्धिगत रूप और बाहरी दृश्य रूप दोनों सत्य हैं।

ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ (स्मृति)–

१. मनुस्मृति
२. पराशर-स्मृति
३. याज्ञवल्क्य-स्मृति
४. नारद-स्मृति
५. बृहस्पति-स्मृति
६. कात्यायन-स्मृति
७. व्यास-स्मृति
८. गौतम-स्मृति
९. वसिष्ठ-स्मृति
१०. भृगु-स्मृति
११. अंगिरा-स्मृति
१२. विष्णु-स्मृति
१३. अत्रि-स्मृति
१४. हारीत-स्मृति
१५. यम-स्मृति
१६. उशनस्-स्मृति
१७. दक्ष-स्मृति
१८. शंख-स्मृति

ਵੇਦ (वेद)–

१. ऋग्वेद— १०मण्डल, १०२८ सूक्त, १०५८० मन्त्र हैं।
२. यजुर्वेद— शुक्ल-यजुर्वेद, कृष्ण-यजुर्वेद दो भाग हैं, ४० अध्याय हैं।
३. सामवेद— पूर्वार्चिक, उत्तरार्चिक दो भाग हैं। १५४९ मन्त्र हैं।
४. अथर्ववेद— ५८४९ मन्त्र हैं। इसमें काण्ड होते हैं।

अठमठि (अड़सठ तीर्थ)–
(१०पउड़ी)

५२ या ५१ शक्तिपीठ, ४ धाम, १२ ज्योतिर्लिङ्ग मिलाकर ६८ संख्या होती है। सम्भवत: गुरु नानकदेव जी ने इसी आधार पर ६८ तीर्थ कहे हैं। यदि ५१ शक्तिपीठ हैं, तो आत्मतीर्थ होने से भी ६८ संख्या ही होगी।

चार धाम–

१. श्री बदरिका धाम— हिमालय में नरनारायण पर्वत के नीचे है। (उत्तर प्रदेश)
२. श्री द्वारिका— गुजरात में समुद्र तट पर है।
३. श्री जगन्नाथ (पुरी)— उड़ीसा प्रान्त में समुद्र तट पर है।
४. श्री रामेश्वर— तमिलनाडु में समुद्र तट पर है।

बारह ज्योतिर्लिङ्ग–

१. सोमनाथ— गुजरात प्रान्त के काठियांवाड़ क्षेत्र में समुद्र तट पर हैं।
२. श्री मल्लिकार्जुन— आन्ध्र प्रदेश में कृष्णा नदी पर।
३. श्री महाकालेश्वर— मध्य-प्रदेश के उज्जैन में।
४. श्री ओंकारेश्वर– मध्य-प्रदेश में नर्मदा तट पर।
५. श्री केदारनाथ— हिमालय के केदार क्षेत्र में।
६. श्री भीमेश्वर— असम के गुवाहाटी में।
७. श्री विश्वेश्वर— उत्तर-प्रदेश, काशी में।
८. श्री त्र्यम्बकेश्वर— महाराष्ट्र के नासिक में।
९. श्री वैद्यनाथ— बिहार प्रान्त के सन्थाल परगना में।
१०. श्री नागेश्वर— गुजरात में द्वारिका पुरी के पास।
११. श्री सेतुबन्ध— तमिलनाडु में समुद्र तट पर हैं।
१२. श्री घुश्मेश्वर— महाराष्ट्र के वेरुल गाँव के पास हैं।

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ–

१. आँख—तैजस—रूप
२. कान—आकाशीय—शब्द

३. नाक—पार्थिव—गन्ध
४. जीभ—जलीय—रस
५. त्वचा—वायवीय—स्पर्श

पाँच कर्मेन्द्रियाँ–

१. वाग्—बोलना
२. हाथ—लेन-देन
३. पाँव—चलना-फिरना
४. मूत्रेन्द्रिय—लघुशंका
५. गुदा—मलत्याग

चार पुरुषार्थ–

१. धर्म २. अर्थ ३. काम ४. मोक्ष

ਰੁਤੀ (ऋतु)–
(पउड़ी २१.)

१. वसन्त— चैत्र और वैशाख मास।
२. ग्रीष्म— ज्येष्ठ और आषाढ मास।
३. वर्षा— श्रावण और भाद्रपद मास।
४. शरद्— आश्विन और कार्तिक मास।
५. हेमन्त— मार्गशीर्ष और पौष मास।
६. शिशिर— माघ और फाल्गुन मास।

ਮਾਹ (मास-महीना)–

१. चैत्रमास
२. वैशाख मास
३. ज्येष्ठ मास
४. आषाढ़ मास
५. श्रावण मास
६. भाद्रपद मास
७. आश्विन मास
८. कार्तिक मास
९. मार्गशीर्ष मास
१०. पौष मास
११. माघ मास
१२. फाल्गुन मास

ਪੁਰਾਣ (पुराण)–

१. ब्रह्मपुराण — १०००० श्लोक हैं।
२. पद्मपुराण — ५५००० श्लोक हैं।
३. विष्णुपुराण — २३००० श्लोक हैं।
४. शिवपुराण — २४००० श्लोक हैं।
५. लिङ्गपुराण — ११००० श्लोक हैं।
६. गरुड़पुराण — १९००० श्लोक हैं।
७. नारदपुराण — २५००० श्लोक हैं।
८. भागवतपुराण — १८००० श्लोक हैं।
९. अग्निपुराण — १५००० श्लोक हैं।
१०. स्कन्दपुराण — ८१००० श्लोक हैं।
११. भविष्यपुराण — १४५०० श्लोक हैं।
१२. ब्रह्मवैवर्तपुराण — १८००० श्लोक हैं।
१३. मार्कण्डेयपुराण — ९००० श्लोक हैं।
१४. वामनपुराण — १०००० श्लोक हैं।
१५. मत्स्यपुराण — १४००० श्लोक हैं।
१६. कूर्मपुराण — १७००० श्लोक हैं।
१७. वाराहपुराण — २४००० श्लोक हैं।
१८. ब्रह्माण्डपुराण — १२००० श्लोक हैं।

नोट :— कुल चार लाख श्लोक हैं १८ पुराणों में।

ਤਿਥਿ (तिथि)–

१. प्रतिपदा
२. द्वितीया
३. तृतीया
४. चतुर्थी
५. पञ्चमी
६. षष्ठी
७. सप्तमी
८. अष्टमी
९. नवमी
१०. दशमी
११. एकादशी
१२. द्वादशी
१३. त्रयोदशी
१४. चतुर्दशी
१५. अमावास्या (३०) और पूर्णिमा (१५)

ਵਾਰ (वार)–

१. रविवार ४. बुधवार ६. शुक्रवार
२. सोमवार ५. बृहस्पतिवार ७. शनिवार
३. मंगलवार

ਨਦਿਆ (नदियाँ)–

१. गङ्गा— उत्तर प्रदेश से होकर गङ्गासागर (बंगाल में विलीन)।
२. यमुना— उत्तर प्रदेश में।
३. गोदावरी— महाराष्ट्र में।
४. सरस्वती— पंजाब में बहती है, प्रयाग में गुप्त है।
५. नर्मदा— मध्य प्रदेश में।
६. सिन्धु— वर्तमान में कराची (पाकिस्तान) में।
७. कावेरी— कर्नाटक प्रदेश में।

ਸਮੁਦਿ (समुद्र)–

१. लवण समुद्र— (खारा पानी)
२. इक्षुरसोद— (गन्ने का रस)
३. सुरोद— (मद्य)
४. घृतोद— (घी)
५. क्षीरोद— (दूध)
६. दधि-मंडोद— (दही)
७. स्वादूदक— (मीठा जल)

ਜੀਅ (जीव)–
(पउड़ी ३४)

१. स्वेदज— कृमि, जोंक जलचर ९,००,००० हैं।
२. जरायुज— पशु चौपाये ३०,००,०००, मनुष्य ४,००,००० हैं।
३. अण्डज— पक्षी १०,००,००० हैं, सर्प, भूमि खोदकर रहने वाले ११,००,००० हैं।
४. उद्भिज— पर्वत, पेड़-पौधे २०,००,००० हैं।

शास्त्रसार में कहा गया है—

स्थावरं विंशतेर्लक्षं जलजं नवलक्षकम्।
कूर्मादि रुद्रलक्षं दशलक्षञ्च पक्षिणः ।।
त्रिंशल्लक्षं पशूनाञ्च चतुर्लक्षञ्च वासवः ।
ततो मनुष्यतां प्राप्य ततः कर्माणि साधयेत् ।।

२८ नक्षत्र	२७ योग
१. अश्विनी— चू, चे, चो, ला।	विष्कम्भ
२. भरणी— ली, लू, ले, लो।	प्रीति
३. कृत्तिका— अ, इ, उ, ए।	आयुष्मान्
४. रोहिणी— ओ, वा, वी, वू।	सौभाग्य
५. मृगशिरा— वे, वो, का, की।	शोभन
६. आर्द्रा— कु, घ, ङ, छ।	अतिगंड
७. पुनर्वसु— के, को, हा, ही।	सुकर्मा
८. पुष्य— हू, हे, हो, हा।	धृति
९. आश्लेषा— डी, डू, डे, डो।	शूल
१०. मघा— मा, मी, मू, मे।	गंड
११. पूर्वाफाल्गुनी— मो, टा, टी, टू।	वृद्धि
१२. उत्तराफाल्गुनी— टे, टो, पा, पी।	ध्रुव
१३. हस्त— पू, ष, ण, ठ।	व्याघात
१४. चित्रा— पे, पो, रा, री।	हर्षण
१५. स्वाती— रू, रे, रो, ता।	वज्र
१६. विशाखा— ती, तू, ते, तो।	सिद्धि
१७. अनुराधा— ना, नी, नू, ने।	व्यतिपात
१८. ज्येष्ठा— नो, या, यी, यू।	वरीयान्
१९. मूल— ये, यो, भा, भी।	परिघ
२०. पूर्वाषाढ़ा— भू, धा, फा, ढा।	शिव

२१. उत्तराषाढ़ा— भे, भो, जा, जी। सिद्ध

२२. श्रवण— खी, खू, खे, खो। साध्य

२३. धनिष्ठा— गा, गी, गू, गे। शुभ

२४. शतभिषा— गो, सा, सी, सू। शुक्ल

२५. पूर्वाभाद्रपदा— से, सो, दा, दी। ब्रध्न

२६. उत्तराभाद्रपदा— दू, थ, झ, ञ। ऐन्द्र

२७. रेवती— दे, दो, चा, ची। वैधृति

२८. उत्तरा का चौथा चरण और श्रवण का पहला चरण अभिजित् नक्षत्र कहलाता है।

११ करण—

१. वव
२. बालव
३. कौलव
४. तैतिल
५. गर
६. वणिज
७. विष्टि
८. शकुनि
९. चतुष्पद
१०. नाग
११. किंस्तुघ्न

१२ राशियाँ—

१. मेष— चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, अ।
२. वृष— ई, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे, वो।
३. मिथुन— का, की, कु, घ, ङ, छ, के, को, हा।
४. कर्क— ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो।
५. सिंह— मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे।
६. कन्या— टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो।
७. तुला— रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते।
८. वृश्चिक— तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू।
९. धनु— ये, यो, भा, भी, भू धा, फा, ढा, भे।
१०. मकर— भो, जा, जी, खी, खू, खे, खो, गा, गी।

११. कुम्भ— गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, से, दा।

१२. मीन— दी, दू, थ, झ, ञ, दे, दो, चा, ची।

अयन– सूर्य के मार्ग

१. उत्तरायण— मकर मास से कर्क मास तक छः मास (१४ जनवरी से १४ जुलाई तक)।

२. दक्षिणायन— कर्क से मकर मास तक छः मास (१५ जुलाई से १३ जनवरी तक)।

छः वेदाङ्ग–

१. शिक्षा— उच्चारण की शुद्धता—"वर्ण-स्वराद्युच्चारणप्रकारो यत्रोपदिश्यते सा शिक्षा।।

२. व्याकरण— "मुखं व्याकरणं स्मृतम्"।

३. छन्द— उच्चारण, अर्थज्ञान को नियमित करना उद्देश्य है।

४. निरुक्त— इसके प्रवर्त्तक महर्षि यास्क हैं। वैदिक शब्दों की व्युत्पत्ति निरुक्त का लक्ष्य है।

५. ज्योतिष— "गणितं मूर्ध्नि संस्थितम्"— शुभ मुहूर्त आदि में उपयोगी है।

६. कल्प— विधि, नियम, न्याय, आदेश आदि इसमें परिभाषित होते हैं।

दिशाएँ–

दिशा	स्वामी	दिशा	स्वामी
१. पूर्व	इन्द्र	६. वायव्य	वायु
२. आग्नेय	अग्नि	७. उत्तर	कुबेर
३. दक्षिण	यम	८. ईशान	ईशान
४. नैऋत	नैऋत	९. ऊपर	
५. पश्चिम	वरुण	१०. नीचे	

चार वर्ण–
(कर्म पर आधारित)

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः" —गीता ४/१३।

१. ब्राह्मण — अध्ययन-अध्यापन
२. क्षत्रिय — रक्षा
३. वैश्य — व्यापार
४. शूद्र — सेवाकार्य

चार आश्रम–

१. ब्रह्मचर्य— १ से २५ वर्ष तक।
२. गृहस्थ— २६ से ५० वर्ष तक।
३. वानप्रस्थ— ५१ से ७५ वर्ष तक।
४. संन्यास— ७६ से १०० वर्ष या ऊपर तक।

।। बोले सो निहाल—सत् श्री अकाल ।।

